मासिक

अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक पत्र

वर्ष :3 I अंक :04 I पृष्ठ :64 I मूल्य :नि :शुल्क I इंदौर–उज्जैन I मंगलवार1 नवंबर 2022 I कार्तिक मास/ अगहन (मार्गशीर्ष) (9), विक्रम संवत् 2079 I इ. संस्करण

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर–वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल

वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)

सम्पादक
डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली)

सह सम्पादक
डॉ. दिग्विजय शर्मा (आगरा)

उपसम्पादक
सुश्री इंदु सिंह ''इन्दुश्री'' (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

- गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
- पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
- समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1	संपादकीय	डॉ. शकुंतला कालरा	03
2	नारियल नहीं है श्रीफल	डॉ. मृणालिका ओझा	05
3	सिंहवाहिनी की वंदना	प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे	07
4	भक्ति भजन प्रादुर्भाव उपयोगिता	डॉ. अर्चना प्रकाश	08
5	प्रबोधिनी एकादशी	षैजू के	10
6	सच्ची मदद	इंदु कौशिक	12
7	मानवीय संबेधो की बुनियाद	डॉ. अजय शुक्ला	13
8	देव दीपावली : देवताओं का पर्व	आकांक्षा यादव	17
9	मैं सुकुमारी नाथ बन जोगू	डॉ. सन्तोष खन्ना	19
10	रघुवीर पग द्वार पे	सुमति श्रीवास्तव	21
11	कालभैरवाष्टमी	पंडित कैलाशनारायण	22
12	कार्तिक पूर्णिमा का विलक्षण गौरव	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम	25
13	कार्तिक मास में दीपदान	अध्यात्म संदेश डेस्क	26
14	गुरू नानकदेव के काव्य में	डॉ. शकुंतला कालरा	28
15	रावण के प्रश्न	कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'	30
16	नदी की धार लिख	व्यग्र पाण्डे	31
17	समकालीन परिवेश में बाल साहित्य	कृष्ण कुमार यादव	32
18	बाल मन पर पड़ता प्रभाव	अंकुर सिंह	35
19	दूषित प्रकार से कमाया गया धन...	डॉ. श्याम सुन्दर पाठक 'अनन्त'	37
20	छप्पन भोग का रहस्य	डॉ. शारदा मेहता	40
21	दशरथ नंदन राम	डॉ. सुनीता सिंह 'सुधा'	41
22	सौभाग्य सुन्दरी व्रत	श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा	42
23	परिवर्तन	सुजाता प्रसाद	43
24	भगवान श्रीरामसीता का विवाहोत्सव	डॉ. दिग्विजयकुमार शर्मा	44
25	नैतिकता	लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	47
26	सत्कर्म की प्रवृत्ति...	डॉ. बी. के. मेधावी शुक्ला	48
27	सामूहिक अथवा दूसरों की ...	सीताराम गुप्ता	50
28	नरसिंह मेहता	सुश्री इंदु सिंह 'इंदुश्री'	52
29	मेरी भोपाल यात्रा – एक संस्मरण	मनमोहन कालरा	54
30	खूब लड़ी मर्दानी, वो तो...	कालिका प्रसाद सेमवाल	56
31	बुढ़ापा	विकास सूर्यकांत वाघमारे	58
32	गरीबों का बादाम : मूंगफली	डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)	60
33	युगद्रष्टा तुलसी	डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक	61
34	अकेलापन	वाढेकर रामेश्वर महादेव	62
35	दीप जलाएं	मुकेश कुमार ऋषि वर्मा	63

संपादकीय

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

अपनी सुंदर रचनाओं सारगर्भित विदुतापूर्ण आलेखों द्वारा पत्रिका को सुंदर आकार प्रदान करने वाले सभी साहित्य-साधकों को मेरा सादर अभिवादन। अक्टूबर माह त्योहारों की धूमधाम में और रौनक में बड़े उल्लास तथा उत्साह के साथ बीत गया। हर माह में वही उल्लास बना रहना चाहिए। नवम्बर माह का आरम्भ पहली तिथि को ही गोपाष्टमी से हो रहा है। कहते हैं यह मुहुर्त शुभ माना जाता है। इस दिन भगवान श्रीकृष्ण ने गौ-चारण आरंभ किया था और यह शुभतिथि कार्तिक मास में शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि थी इस कारण यह गोपाष्टमी कहलाई। गोपाष्टमी के दिन गाय के अंगों पर रोली, मेहंदी और हल्दी से थापा दिया जाता है और इस तरह गायों की पूजा करके उनकी परिक्रमा करते हैं। ग्वालों को उपहार आदि देकर उनका सम्मान किया जाता है।

गुरु नानकदेव जयन्ती इस माह का सबसे बड़ा त्योहार है। गुरु नानकदेव जी ने परमात्मा का साक्षात्कार किया और प्रत्यक्षानुभूति भी प्राप्त की। उनकी वाणी का संकलन गुरुग्रंथसाहिब के महला 1 में प्राप्त होता है। 19 रागों में निबंद्ध 2949 छंदों में गुरु नानकदेव ने अध्यात्म और भक्ति की ऐसी रसधारा प्रवाहित की है जिसमें ज्ञानी और भक्त, दार्शनिक और विचारकों के साथ सहृदय पाठकगण पूर्ण रूप से डूब जाते हैं। गुरु नानकदेव का बीज मंत्र है -

ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरु प्रसादि।

गुरु नानकदेव जी ने जो संदेश दिया,वह था-'वंड के छकना' अर्थात् बांट कर खाना। गुरुद्वारों में लंगर की प्रथा तभी से चली आ रही है। इस दिन पूरे देश में सड़कों पर भंडारे लगते हैं। रोशनी से घर और गुरुद्वारे जगमगा उठते हैं। इस पावन त्योहार पर मन भी पावन विचारों से भर जाता है। मन में हमेशा त्योहार का भाव बना रहना चाहिए, वही आशा- उल्लास। क्योंकि निराशा का भाव, कुछ न करने का भाव हमें उत्साह-हीन बना देता है। बड़ी स्फूर्ति के साथ त्योहारों की तैयारी में तब हमें थकान का अनुभव नहीं होता। लेकिन जब कुछ करने का भाव नहीं रहता तो हम ढीले-ढीले हो जाते हैं और ढीला-ढीला

आदमी, बुझा-बुझा आदमी कुछ नहीं कर पाता इसीलिए जिंदगी में उल्लास को हमेशा बनाए रखें। जब हम कोई भी काम उल्लास के साथ करेंगे, आशा रखकर गाते-मुस्कुराते करेंगे तो हमें थकावट नहीं होगी। आनंद ही आनंद महसूस होगा। समस्याएँ तो जिंदगी में रहेंगी लेकिन उनकी चिंता में ही जीवन को समाप्त कर देना तो बुद्धिमता नहीं। कोई हालत या परिस्थिति आई है तो प्रकृति संभवत: हमें कुछ समझाना चाहती है कि उस प्रतिकूलता में अपने को जाने, अपने को पहचाने। किसी भी हालत से हमें हमारा निश्चय छुड़ाएगा। चिंता और निराशा से कोई समाधान नहीं मिलेगा। चिंता मनुष्य को खोखला कर देती है। चिंता दीमक की तरह मनुष्य की खुशियों को चाट जाती है। डेढ़ सौ वर्ष के पुराने पेड़ को यदि दीमक लग जाए तो वह भी एक हवा के झोंके से गिर जाता है। अत: चिंता छोड़कर ईश्वर का चिंतन करें। उस दयालु की दया पर विश्वास रखें कि वह हमें राह दिखाएगा। हमारी रक्षा करेगा। जो हमारे लिए शुभ होगा ईश्वर हमारे लिए वही करेगा। हमें समस्याओं से जूझने की शक्ति और सामर्थ्य देगा। अपना प्रयास करते रहना चाहिए। उत्साह और मनोबल को ठंडा न होने दें।

इसी माह नेहरू-जयंती भी है। बच्चों के प्यारे चाचा नेहरू का जन्मदिन। प्रतिवर्ष यह पूरे देश में 'बालदिवस' के रूप में मनाया जाता है। स्वाधीनता के 75 वर्ष बीत जाने के पश्चात् भी बच्चों की स्थिति प्रत्येक बहुत कुछ बदलाव की मांग करती है। सबसे बड़ा सवाल देश में प्रत्येक बच्चे को अच्छी शिक्षा मिलने का है।

इन्हीं दिनों की एक सबसे बड़ी और हर भारतीय को गौरवान्वित करने वाली सुखद खबर है ब्रिटेन (यू.के.) में रहने वाले भारतीय मूल के ऋषि सुनक का वहाँ का प्रधानमंत्री चुना जाना। हम आशा करते हैं कि इससे भारत और ब्रिटेन के संबंधों में मधुरता आएगी तथा रिश्ते और प्रगाढ़ होंगे।चलते-चलते मैं फिर दुहराना चाहूंगी कि त्योहारों वाला अहसास हर दिन रखें। हमेशा, हर वक्त, हर रोज़ खुशी और आनंद में रहें। सोचो रोज़ दीवाली है। खुशी के दीये रोज़ जलाएँ क्योंकि हमारे दिल में गोल्डन लाइट है। अपने मन को नकारात्मक विचार देकर कमज़ोर न बनाएँ। हमेशा सोचें की सुख मेरे नज़दीक आ रहा है। जिंदगी काटने के लिए नहीं है वरन् साँस-साँस, खुशी-खुशी जीने में है। आप हर दिन प्रसन्न रहें। इसी मंगल कामना के साथ-

शकुंतला कालरा

नारियल नहीं है श्रीफल

डॉ. मृणालिका ओझा
स्वतंत्र लेखन
रायपुर, छत्तीसगढ़

इस समूचे ब्रह्मांड में पृथ्वी सबसे सुंदर है, और पृथ्वी में सुंदरतम है 'भारत'। भारत का सम्मान और सौंदर्य उसकी संस्कृति के कारण है। भारत की संस्कृति ही सर्वाधिक मूल्यवान है। हमारी संस्कृति का मूलाधार है – ब्रह्म एवं आत्म–ज्ञान। इस ब्रह्मांड के सृजेता को एवं स्वयं को जानने की परम जिज्ञासा में भारतीयों को तप, त्याग एवं तुष्टि का मार्ग दिखाया। यही वह मार्ग है, जहां सत्य का आलोक है, परोपकार की प्राण वायु में प्रेम एवं आत्मीयता है। एक ब्रह्म तत्व की सर्वत्र विद्यमानता का सिद्धांत व्यष्टि एवं समष्टि के संबंधों को प्रकाशित करता है। चिंतन की इसी मुख्यधारा से मनुष्य का रोम–रोम ऊर्जा युक्त होता है, जब वह स्वयं को परम सत्ता में और उस अलौकिक सत्ता को स्वयं में अनुभव करता है। इसी सूक्ष्म में अनंत या विराट की शक्ति से ही साधकों एवं तपस्वियों ने संपूर्ण ब्रह्मांड को अपने रोम – प्रतिरोम में अनुभव किया और उनके विषय में ज्ञान प्राप्त किया। ये बातें भले ही काल्पनिक लगती हों, किंतु भारत की इस पवित्र तपोभूमि पर आज भी ऐसे सिद्ध महात्मा उपलब्ध हैं। आध्यात्म पथ पर चलने वाले अनेक साधकों एवं मनुष्यों को इनके दर्शन का सौभाग्य मिल ही जाता है।

वस्तुतः किसी भी विद्या की साधना के दिए कुछ विशेष पद्धतियां होती हैं। इनमें 'सूक्ष्म से स्थूल' एवं 'स्थूल से सूक्ष्म' जैसी पद्धतियां भी हैं। वर्तमान आधुनिक विज्ञान जिस पद्धति से विकास कर रहा है वह 'सूक्ष्म से स्थूल' की ओर है, अतः वह बहिर्मार्गी प्रणाली है। इसके ठीक विपरीत आध्यात्म विज्ञान का मार्ग 'स्थूल से सूक्ष्म' की ओर चलता है। तब व्यक्ति अपने अंतःकरण की और एकाग्र होता है। अंतर्मुखी होती हुई यही चेतना उस आत्म तत्व पर केंद्रित हो जाती है, जिसका अपरिमित रूप पूरे ब्रह्मांड उद्मासित, विनिर्मित, विखंडित और पूनः केंद्रित कर सकता है। यही कारण है कि काल की सीमा के परे अलौकिक शक्तियां एवं ज्ञान इनकी मुट्ठी में होते हैं। इन विभिन्न शक्तियों एवं ऊर्जाओ के अलग–अलग स्रोत ब्रह्मांड में विद्यमान हैं। इन स्रोतों को इनका स्वामी या आराध्य मानकर अनेक प्रकार से कल्पनाएं की गई

हैं। आध्यात्मिक अनुभव द्वारा ही इन विभिन्न शक्तियों को संवर्धित करने वाली वनस्पतियों, फलों, फूलों, जीवों या रंगो आदि को उनका अभीप्रेय माना गया है। अतः इन्हें अलग–अलग पत्र, पुष्प, फल, रस समर्पित कर प्रसन्न रखने का प्रयास किया जाता है।

इन इष्ट देवी – देवताओं को विभिन्न तिथियों एवं पर्व आदि में श्रद्धापूर्वक आह्वान कर उनकी पूजा की जाती है। उनके स्वागत – सम्मान में वंदनवार समुज्वलित दीप, सजल कलश एवं नारियल का फल आदि रखा जाता है। दिव्य गंध, पुष्प, वस्त्र आदि भावनात्मक रूप में समर्पित किए जाते हैं। ठीक इसी तरह हमारी संस्कृति में अपने आदरणीय एवं विशिष्ट जनों को सम्मानित करने की परंपरा है। यह अद्यतन भारतीय समाज में प्रचलित है। व्यक्ति जिस गुण–धर्म, पद– प्रतिष्ठा का होता है उसी आधार पर विभिन्न वस्तुओं द्वारा उनका सम्मान होता है एवं उचित वस्तुएं उपहार स्वरूप दी जाती है।

आजकल विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्ति की विशिष्टता एवं उपलब्धियों के आधार पर सम्मान का प्रचलन अपेक्षाकृत बढ़ा है। अब सम्मान के अधिकारी केवल राजा – महाराजा ही नहीं अपितु आम आदमी कर्मचारी एवं विद्यार्थी भी हैं। सम्मान स्वरूप नारियल, उप वस्त्र (शॉल), पदक एवं स्मृति चिन्ह भेंट किए जाते हैं। प्रायः लोग नारियल भेंट करते हैं और उद्घोषणा की जाती है 'श्रीफल' प्रदान करने की। मेरे इस लेख का उद्देश्य 'नारियल' एवं 'श्रीफल' के विषय में जो भ्रम लोगों में पनप रहा है उसे दूर करना है। यदि नारियल एवं श्रीफल इन दोनों को एक ही फल मान लिया जाएगा तो भविष्य में वास्तविक 'श्रीफल' लुप्त हो सकता है। अतः आवश्यक है कि हम श्रीफल एवं नारियल को अलग–अलग समझ लें।

लोक में सभी वस्तुओं की व्युत्पत्ति से संबंधित कथा प्रचलित है। लोक को पुराणों से भी पूर्व का माना जा सकता है। नारियल की उत्पत्ति से संबंधित पौराणिक कथा इस प्रकार है – एक बार राजा त्रिशंकु को सशरीर स्वर्ग जाने की प्रबल इच्छा हुई। उन्होंने अपनी इच्छा बड़े–बड़े ऋषि–मुनियों से कही। ऋषियों ने इसे असंभव बताया। अतः राजा, महर्षि विश्वामित्र के पास गये। महर्षि विश्वामित्र ने अपने तपोबल से अनेक सिद्धियां प्राप्त की थी। उन्हें अभी तक ब्रह्मर्षि की पदवी नहीं मिली थी, अतः वे देवताओं से कुछ रूष्ट भी थे। राजा त्रिशंकु की इच्छा पूर्ति के लिए उन्होंने राजा को आश्वस्त किया। यज्ञ प्रारंभ हुआ। यज्ञ के पवित्र धूम्र के साथ ही राजा त्रिशंकु स्वर्ग के निकट पहुंच गए। इधर देवताओं में खलबली मच गई। उन्होंने अपनी शक्ति एवं बल के प्रयोग से उसे नीचे प्रस्थित करना शुरू कर दिया। भयभीत राजा त्रिशंकु ने विश्वामित्र से अपने उद्धार की प्रार्थना की। विश्वामित्र ने उन्हें बीच में ही रोक दिया एवं एक अन्य स्वर्ग बनाने में जुट गए। उन्होंने नये देवी – देवताओं का सृजन करने हेतु अनेक अंगों का निर्माण किया। यह देखते ही देवताओं के होश उड़ गए। उन्होंने कातर शब्दों में महर्षि से निवेदन किया कि आप सर्वसक्षम हैं, ब्रह्मर्षि हैं, कृपया दूसरे स्वर्ग का निर्माण ना करें। देवताओं ने महर्षि को प्रसन्न किया और उनके द्वारा विनिर्मित विभिन्न अंगों को पृथ्वी पर वनस्पति के रूप में उत्पन्न कर दिया। नारियल उसी पिंड का शीर्ष भाग है इसीलिए नारियल का आयुर्वेदिक महत्व सिर के लिए अधिक है। 'सिर' सम्मान का भी

प्रतीक होता है। अतः नारियल को एक और जहां सम्मान का प्रतीक माना जाता है वही 'बली – फल' के रूप में भी प्रयोग किया जाता है, क्योंकि बलिदान (भौतिक) में सिर का ही महत्व होता है। जलयुक्त नारियल को शुभ कार्यो के लिए तथा सम्मान प्रदान करते समय अनिवार्य माना जाता है। नारियल को संहारक शक्तियों के सामने ही फोड़ा जाता है। (जैसे दुर्गा, काली, चामुंडा आदि)। देवियों के समक्ष नारियल फोड़ना शास्त्र वर्जित है।

अब यहां 'श्रीफल' की व्युत्पत्ति कथा से परिचित होना अपरिहार्य है – किसी युग में माता अनुसूइया के सतीत्व की पराकाष्ठा से तीनो लोक गूंज रहा था। देवताओं की शक्ति उनके सामने नगण्य होने लगी। तीनो लोक महासती अनुसुइया के समक्ष नतमस्तक थे। ब्रह्माणी, लक्ष्मी और पार्वती जैसी महाशक्तियों के लिए यह बात नागवार गुजरी। उनके मन में संशय देखकर नारद जी ने देवियों को अनुसुइया की परीक्षा लेने हेतु प्रेरित किया ताकि सच्चाई जानी जा सके। त्रिदेवियों के मन ईर्ष्या उत्पन्न हो गई। उन्होंने सती अनुसुइया के सतीत्व की परीक्षा हेतु त्रिदेवों को पृथ्वी पर प्रस्थित किया। तीनों देवता भिक्षा– याचना करते हुए अनुसूइया की देहरी पर पहुंचे। जब अनुसूइया भिक्षान्न लेकर पहुंची तो देवताओं ने निर्वस्त्र नारी से भिक्षान्न लेने की शर्त रखी। देवी ने यह शर्त सरकार की। उन्होंने तुरंत तीनों देवताओं को अपने मंत्र शक्ति से एक वर्षीय शिशु के रूप में परिवर्तित कर दिया। फिर तीनों को स्नेपूर्वक भरपेट खाना खिलाया और पालने में सुला दिया। इस घटना की जानकारी तीनों महादेवियों को हुई, तो वे दौड़ती – भागती अनुसुइया के आश्रम में उपस्थित हुई। उन्होंने महासती अनुसुइया के सतीत्व को प्रणाम

किया तथा अपने पति की प्राप्ति हेतु निवेदन किया। भगवान शंकर के भोले – भाले ओजस्वी मुखमंडल को देखकर महालक्ष्मी के हृदय में वात्सल्य का सागर हिलोरे लेने लगा। उनके नारी सुलभ पियूष कलशों से वात्सल्य– सुधा फूट पड़ी इसी अमृत धार से **'बिल्व'** अर्थात् बेल की उत्पत्ति हुई। **'श्रीदेवी'** के वात्सल्य से उत्पन्न होने के कारण इसे **'श्रीफल'** भी कहा जाता है।

'लक्ष्म्याः स्तनत उत्पन्नं, महादेवस्य च प्रियम।'
'बिल्व वृक्षम् प्रयच्छामि, ह्रयेक बिल्वं शिवार्पणम्।।'

विहंगम दृष्टिपात के बाद भी श्रीफल अर्थात् **'बेलफल'** और **'नारिकेल'** अर्थात् नारियल के फल में कोई विशेष साम्य दृष्टिगत नहीं होता। धार्मिक दृष्टि से बिल्व पत्र शिवजी को अर्पित किया जाता है। बिल्वपत्र के बिना शिवजी की पूजा – आराधना अधूरी सी लगती है। शिवजी को बिल्वपत्र समर्पित करने की प्रथा आज भी प्रचलित है, किंतु विष्णु जी को **'बिल्वफल'** अर्थात **'श्रीफल'** समर्पित करना चाहिए, यह कम लोग ही जानते हैं। आधुनिक परिवेश में **'बेलफल'** का प्रचार – प्रसार बहुत ही कम हो गया है। यह लगभग ग्रामीणों की पसंद तक सीमित हो गया है। बाजार में उपलब्ध इसके विभिन्न खाद्य एवं औषधीय उत्पाद भी आम–जीवन में अधिक लोकप्रिय नहीं है। लोग श्रीफल की उपयोगिता को भूल रहे हैं। अतः श्रीफल एवं नारीकेल के बीच भ्रमात्मक स्थिति भारतीय समाज के लिए हानिकारक है। श्रीफल की जगह नारियल को श्रीफल मान लेना भाषा वैज्ञानिक त्रुटि एवं शब्द– संपदा की क्षति है। यह विचारणीय है कि नारियल की जगह श्रीफल का प्रचार – प्रसार वास्तविक श्रीफल को समाज व साहित्य से बहिष्कृत कर सकता है। श्रीफल एक बहु उपयोगी फल है। पर्यावरण के लिए भी बिल्व – वृक्ष के अमूल्य अवदान है इससे विज्ञान जगत परिचित है। लोग यदि इसी प्रकार बिल्व वृक्ष या श्रीफल की उपेक्षा करते रहे तो आयुर्विज्ञान और समाज दोनों के लिए यह एक महत्वपूर्ण क्षति होगी।

श्रीफल स्वास्थ्य एवं संपन्नता का द्योतक होता है। पेट संबंधी अधिकांश बीमारियों, मधुमेह एवं यौन शक्ति के ल्हास को दूर करने के लिए श्रीफल एक महत्वपूर्ण फल है। पीलिया एवं पेशाब संबंधी बीमारियों में भी औषधि का कार्य करता है। नेत्र की ज्योति वर्धन के लिए जितने पीले फल खाए जाते हैं उनमें बेल का नाम अग्रगण्य है। बिल्व– वृक्ष पर्यावरण को स्वच्छ, स्वस्थ एवं सुरभीत रखता है।

नारियल के भी अनेक उपयोग हैं, जिनमें सौंदर्य – वृद्धि का स्थान सर्वोपरि है। यह सिर, केश एवं त्वचा के लिए विभिन्न रूपों में अनेक दृष्टि से लाभदायक है। मातृत्व ग्रहण करती हुई महिला इसके नियमित सेवन से स्वस्थ व सुंदर संतान प्राप्त कर सकती है। नारियल चर्म रोगों के इलाज में भी उपयोगी होता है। हस्तशिल्प की वस्तुओं के निर्माण में भी यह बहु उपयोगी है।

इस तरह हम देखते हैं कि नारियल और श्रीफल की उत्पत्ति से उपयोगिता तक दोनों में इतने अधिक अंतर है कि नारियल व श्रीफल में भ्रमात्मक स्थिति उत्पन्न होने की संभावना कहीं दिखाई नहीं पड़ती। फिर भला क्या, अब भी आप **'नारियल'** को **'श्रीफल'** कहना चाहेंगे।

सिंहवाहिनी की वंदना

प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे
प्राचार्य
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

तम को हरने वाली माता, आज उजाला कर दे।
धर्म, नीति में जो हैं रहते, उनको अब तू वर दे।।

रहे पहाड़ों पर तू माता, आशीषें ले आती।
सुख–वैभव देकर भक्तों को, दुःख सभी ले जाती ।।
भटक रहे जो फुटपाथों पर, उनको अब तू घर दे।
धर्म, नीति में जो हैं रहते, उनको अब तू वर दे।।

कन्याओं सँग है हैवानी, अपनी तेग चलाओ।
तुमने तो नित दानव मारे, निज आवेग बताओ।।
मैं तो युग–युग से हूँ पीड़ित, मुझको अपना दर दे।।
धर्म, नीति में जो हैं रहते, उनको अब तू वर दे।।

झूठों की महफिल जमती है, मक्कारों की चाँदी।
बनकर आओ माता तूफाँ, बन जाओ तुम आँधी।।
चलूँ सदा मैं सत्यमार्ग पर, ऐसा आज असर दे।।
धर्म, नीति में जो हैं रहते, उनको अब तू वर दे।।

शेरसवारी तेरी माता, नूर सदा बरसाती।
रणचण्डी जब तू बन जाती, दुनिया है थर्राती।।
असुर दुष्ट, पापी, अन्यायी, सबको आज कहर दे।
धर्म, नीति में जो हैं रहते, उनको अब तू वर दे।।

अँखियों में अँसुअन का डेरा, पीड़ा ने घेरा है।
सदा अभावों के हमले हैं, कष्टों का डेरा है।।
तृषाग्रसित हो भक्त भटकते, शीतल नीर नहर दे।।
धर्म, नीति में जो हैं रहते, उनको अब तू वर दे।।

मेरी वाणी मधुर–सरस हो, ऐसा तू उपहार दे।
मैं सच्चा मानव बन पाऊँ, ऐसा तू संसार दे।।
गीत, गजल सब दिल में उतरें, ऐसी आज बहर दे।।
धर्म, नीति में जो हैं रहते, उनको अब तू वर दे।

भक्ति भजन प्रादुर्भाव उपयोगिता

डॉ. अर्चना प्रकाश
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उ.प्र.

मानव सभ्यता के उदय के साथ–साथ मानव जीवन में घटित होने वाले दुःख क्लेश मृत्यु रोग आदि से व्यथित मन को शांति की असीम शक्ति की आवश्यकता हुई, साथ ही उसे असीम शक्ति का एहसास भी हुआ जिसकी सत्ता में सांसारिक परिवर्तन अनजाने अनायास ही संपन्न हो जाते हैं। सूर्य, चंद्रमा, आकाश, पृथ्वी इनकी महत्ता और शक्तियों के सम्मुख मानव मन व बुद्धि से नतमस्तक हुआ है। वस्तुतः यही भक्ति भावना का प्रादुर्भाव था जिसे समयांतर से धर्म का नाम दिया गया। अत्यधिक बेचैनी असह्य दुःख में मनुष्य असीम ईश्वर का सहारा लेता है और कष्ट निवारण के लिए ईश्वर से जिन शब्दों वाक्यों का प्रयोग करते हैं उसे प्रार्थना कहते हैं। प्रार्थना ही व्यापक होकर भजन में परिवर्तित हो जाती है। जब कष्टप्रद समय बीतने के बाद भी जब मन ईश्वर में उसके गुणगान में तन्मय हो जाता है और आत्मा की गहराई की अनुभूतियां शब्दों में वाणी से मुखरित होने लगती है तब उस गीत को भजन और मन की भावना को भक्ति कहते हैं।

पौराणिक कथाओं में भक्त प्रहलाद जो कि राम नाम का जाप शिशु अवस्था से ही करते थे और बालक ध्रुव जिन्होंने 5 वर्ष की आयु में भक्ति की शक्ति से देवराज इंद्र को प्रकट होने के लिए विवश कर दिया था के नाम अविस्मरणीय है ।

हिंदी साहित्याकाश में तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई, रसखान, बिहारी आदि ऐसे भक्त शिरोमणि हुए हैं जिन्होंने अपने आराध्य राम और कृष्ण की भक्ति में विभोर होकर अतुलनीय महाकाव्य ग्रंथों की रचनाएं की। जिससे भक्तिकाल अमर हो गया, साथ ही भक्ति धर्म का अभिन्न अंग भी बन गई। अनेकों विधि–विधान, तीर्थाटन, पर्व स्नान आदि भक्ति के साथ जुड़ते गए। इस तरह कर्म और भक्ति ही जनसाधारण की संपत्ति बन गए।

सृष्टि के आदिकाल से ही बज्रायनी सिद्ध, कापालिक, नागपंथी जोगी, योग तंत्र साधना ओं का उल्लेख विभिन्न ग्रंथों में मिलता है। अनेकों सिद्ध ऋषि–मुनियों के उल्लेख भी मिलते हैं। किंतु इसे हम सरल भक्ति न कह कर धर्म का ही अभिन्न रूप मानते हैं। क्योंकि ऐसे धर्म से बचे रहने के उपदेश विभिन्न सूफी कवियों ने दिए हैं।

'पाहन पूजें ते हरि मिलै ,
तो मैं पूजू पहाड़। '(कबीर) ,

'गंगा जउना मांझे बहइ रे नाइ।' गोरखनाथ संप्रदाय के ग्रंथों में ईश्वरौ उपासना के बाह्य विधानो की उपेक्षा की गई है –

'योगशास्त्रं पठेन्नित्यम किमन्ये शास्त्रविस्तरै :
शिव न जानामि कथम वदामि'

(गोरखसिद्धांत संग्रह)

वस्तुतः धर्म का प्रवाह कर्म ज्ञान और भक्ति इन तीन धाराओं में चलता है। कर्म के बिना धर्म लूला लंगड़ा रहता है तो ज्ञान के बिना धर्म अंधा

रहता है किंतु भक्ति के बिना मन निष्प्राण रहता है। क्योंकि भक्ति ही वह भावना है जो हृदय से संजीवनी का संचार कर के मन मस्तिष्क को ऊर्जा प्रदान करती है तथा कर्म की उपयोगिता भी बढ़ाती है। इस तरह से भक्ति धर्म का एक अंग तो है किंतु इसे हम संपूर्ण धर्म नहीं कह सकते।

भक्ति के मार्ग में भी हमें दो धाराएं मिलती है सगुण भक्ति व निर्गुण भक्ति। सगुणोउपासक भक्त भगवान के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों को मानते हैं, किंतु भक्ति के लिए सगुण रूप ही स्वीकारता है। निर्गुण भक्त भगवान के निराकार रूप की उपासना करते हैं। यह मुख्यता ज्ञानमार्गी होते हैं। इनके काव्य को निर्गुण वाणी कहते हैं, जो साधुककड़ी भाषा में होते हैं । किंतु सगुण भक्ति के गीत पद ब्रजभाषा, अवधी, खड़ी बोली सभी में होते हैं। भक्ति के मार्गो में एक मार्ग सूफी भक्ति का भी रहा है, जिसमें, उन्होंने खंडन मंडन की बुद्धि को किनारे रखकर सिर्फ मनुष्य के हृदय को स्पर्श करने का ही प्रयत्न किया है। प्रेम मार्गी सूफी कवियों में सबसे अग्रणी जायसी हुए हैं, जिनका 'पद्मावत' अद्भुत रत्न है।

भजन और प्रार्थना मनुष्य के हृदय में उठते हुए दुख व बेचैनी को समाप्त कर शांति प्रदान करते हैं। भजनों के द्वारा भक्त ईश्वर के विभिन्न स्वरूपों की मानसिक आराधना करते हैं, जिससे भक्त और भगवान के बीच एक आध्यात्मिक संबंध स्थापित हो जाता है।

'शब्द तो हृदय बसे शब्द नयनो बसै,
शब्द की महिमा चार वेद गायी।

(योग चिंतामणि से)

ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करने वाले भी ईश्वर के दर्शन करने में असमर्थ रहते हैं परंतु भजन उसी निर्गुण ईश्वर को साकार कर देता है और शाब्दिक चित्र के द्वारा भक्त अपने प्रभु के साक्षात दर्शन कर लेता है,'

भजनों के गीत–संगीत से मन आह्लादित हो उठता है । कहा गया है मन भज ले हरी का प्यारा नाम है । रसखान और जायसी मुस्लिम भक्त थे, उन्होंने भगवान कृष्ण का सजीव वर्णन अपने पदों में किया है जो अविस्मरणीय हैं :–

'जो खग है तो कहां बस मेरो,
बसेरा करो नित कुंज कदम्ब के डारन'

प्रसिद्ध कवि भक्त सूरदास जी गोवर्धन पर श्रीनाथजी के मंदिर में भजन–कीर्तन किया करते थे। भजन अकेले या अनेक भक्तों की मंडली के साथ आज भी गाए जाते हैं इन्हीं भजनों का विकसित रूप घरों में होने वाले नवरात्रि जगराते हैं। जिसमें रात भर जागकर मां दुर्गा के भजन गाए जाते हैं। भक्तों को भक्ति भाव की पराकाष्ठा उसके भजनों में ही देखने को मिलती है।

'सिया राम मय सब जग जानी करो प्रणाम जोरि जुग पानी'

(रामचरितमानस)

भक्ति भाव की पराकाष्ठा के उदगारों में भक्त को अपने आराध्य के सिवा और कुछ याद ही नहीं रहता है।

प्रबोधिनी एकादशी

बैजू के
अतिथि अध्यापक, हिन्दी विभाग
मार अथानासियस कॉलेज
कोतमंगलम, केरल

कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी को हरिप्रबोधिनी एकादशी, देवोत्थान एकादशी या देवउठनी एकादशी एवं तुलसी विवाह के नाम से भी जाना जाता हैं। इस दिन की मान्यता के अनुसार कहा जाता हैं कि भगवान विष्णु चार महीने में क्षीरसागर में निद्राकाल के बाद जागते हैं।

हर साल में 24 एकादशी मानी जाती हैं। सभी का अपना अपना धार्मिक महत्व होता हैं. इस साल देवउठनी एकादशी की तिथि 4 नवम्बर 2022 हैं। इस दिन भारत भर में इस पर्व को बड़े उत्साह एवं हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है।

देवउठनी एकादशी व्रत कथा : इसके सम्बन्ध में कथा यह है कि भाद्रपद की एकादशी को ही भगवान विष्णु ने शंखासुर नामक राक्षस को मार कर भारी थकावट से शयन कर कार्तिक शुक्ल एकादशी को नयानोन्मीलित किये थे। इस तिथि के बाद ही शादी विवाह आदि शुभ कार्य शुरू होने लगते है।

तुलसी विवाह की कथा व गीत : कार्तिक मॉस की शुक्ल पक्ष की एकादशी को कार्तिक स्नान करने वाली स्त्रियाँ तुलसी जी तथा शालिग्राम का विवाह करती हैं। समस्त विवाह को विधि विधान के अनुसार खूब गाजे बाजे के साथ तुलसी के बिरवे से शालिग्राम के फेरे एक सुंदर मंडप के नीचे डाले जाते हैं। विवाह में गीत तथा भजन गाने की प्रथा हैं।

मग्न भई तुलसी राम गुन गईके, मगन भई तुलसी।
सब कोऊ चली डोली, पालकी रथ जुडवाई के।
साधू चले पाँ पैयाँ, चीटी सों बचाई के।
मगन भई तुलसी राम गुन गाइके।।

देवउठनी एकादशी का महत्व : ऐसी धार्मिक मान्यता है कि इस एकादशी के दिन ही भगवान विष्णु चौमासा की चार माह की घोर निद्रा के बाद जागृत होते हैं। इसी कारण भक्त

इस दिन भगवान के नाम का व्रत रखते हैं।

इस सम्बन्ध में मान्यता है कि जो भक्त इस दिन सच्ची भक्ति एवं आस्था के साथ व्रत का धारण करता हैं उसे बैकुठ धाम की प्राप्ति होती हैं तथा जीवन में किये गये बुरे कर्मो तथा पापों से छुटकारा मिल जाता हैं. साथ ही व्रत रखने वाले भक्त के शनि तथा चन्द्रमा दोष भी निष्प्रभावी हो जाते हैं।

देवउठनी एकादशी की पूजा विधि : घंटा, शंख, मृदंग आदि वाद्यों की मांगलिक ध्वनि से सभी देवगणों को चार माह की निद्रा के बाद जगने के बाद स्वागत किया जाता हैं।

इस एकादशी को व्रत रखने वाले आंवला, सिंघाड़े, गन्ने और मौसमी फलों आदि का भोग लगाना चाहिए।

भक्त को सवेरे ब्रह्म मुहूर्त में स्नान करने के बाद देवउठनी एकादशी के व्रत को करने का संकल्प लेना चाहिए।

घटस्थापना के बाद भगवान विष्णु जी की तस्वीर को स्थापित कर उनके सहस्त्र नाम का जप करना चाहिए।

अब भगवान की मूर्ति पर गंगाजल के छीटें देकर रोली और अक्षत का भोग लगाना चाहिए।

पूजन के लिए देवउठनी एकादशी की कथा का वाचन करे तथा घी का दीपक जलाकर उनकी आरती उतारें तथा मंत्रों का जाप करे।

अब प्रसादी का भोग लगाएं तथा इन्हें ब्राह्मण आदि में वितरित कर उन्हें दान देकर विदा करें

प्रबोधिनी (देवउठनी) एकादशी 2022 : सतयुग में दान के लिए राजा हरिश्चन्द्र बहुत विख्यात थे। ऋषि विश्वामित्र जी को अपने वचन के अनुसार दक्षिणा देने के लिए राजा हरीशचन्द्र को चांडाल के यहाँ नौकरी करनी पड़ी थी। राजा को जब श्मशानघाट पर चांडाल का कार्य करते काफी समय बीत गया तभी अचानक एक दिन गौतम ऋषि से उनके दर्शन हो गये।

राजा हरिश्चन्द्र ने अपनी आपबीती राजा को कह सुनाई, तब ऋषि ने राजा को इस कष्ट से छुटकारा पाने के लिए भाद्रपद महीने की इसी जया एकादशी का व्रत रखने की बात कही।

हरिश्चन्द्र ने प्रबोधिनी एकादशी का व्रत रखना शुरू कर दिया। इसी समय राजा के राजकुमार को सांप ने काट लिया, जिससे उसकी मृत्यु हो गई।

शैव्या रानी जब रोहित का अंतिम संस्कार करने के लिए उसे श्मशानघाट ले आई, तो राजा ने उनसे श्मशान कर माँगा। उस समय शैव्या रानी के पास राजा को कर चुकाने का कोई साधन नही था। अतः उसने अपनी चुनरी का कोर चीरकर श्मशान कर को चुकाया।

राजा व रानी के सत्य एवं व्रत की इस परीक्षा के बहुत प्रसन्न हुए, तथा उन्होंने दर्शन देकर राजा रानी को खूब प्रशंसा की। तथा उनके पुत्र रोहित को जीवित कर दिया। इस तरह प्रबोधिनी एकादशी का व्रत रखने से राजा रानी ने अपने पुत्र के साथ लम्बे समय तक राज्य सुख भोगा तथा अंत में स्वर्ग को प्राप्त हुआ।

इसके बाद आपको एक दिया इसी के बगल में जलाना चाहिए और आपको रात में भी एक दिया लगातार इसके बगल में जलता रहे इस प्रकार से रखना चाहिए।

रात को लगभग 10:00 बजे के आसपास आपको अपने पूरे परिवार के साथ मिलकर के इस की पूजा करनी चाहिए और शंख बजाना चाहिए और इस प्रकार से आपको पूजा करने के बाद परिवार सहित फलाहार करना चाहिए और प्रबोधिनी एकादशी के व्रत का समापन करना चाहिए।

प्रबोधिनी एकादशी का महत्व : आपने देवशयनी एकादशी के बारे में सुना ही होगा। जब यह एकादशी चालू होती है तो भगवान विष्णु और अन्य सभी देवी देवता तकरीबन 4 महीने के लिए निद्रा की अवस्था में चले जाते हैं और इन 4 महीनों के दरमियान कोई भी शुभ काम हिंदू धर्म को मानने वाले लोग नहीं करते हैं।

जब यह 4 महीने पूरे हो जाते हैं तो प्रबोधिनी एकादशी आती है जिसे कई जगह पर देवउठनी एकादशी के नाम से बुलाया जाता है। प्रबोधिनी एकादशी इस बात का संकेत है कि जिंदगी में से अंधकार दूर होने के बाद एक नया उजाला आता है।

क्योंकि जब भगवान विष्णु अन्य देवी-देवताओं के साथ देवशयनी एकादशी के प्रारम्भ होने के बाद तकरीबन 4 महीने तक निद्रा में होते हैं तो सारे संसार में अंधकार छाया हुआ होता है और जब प्रबोधिनी एकादशी आने के बाद वह निद्रा से जागते हैं तो पूरे संसार में फिर से प्रकाश का फैलाव होता है और नई ऊर्जा का संचार होता है। प्रकाश का बोध होने के कारण भी इसे प्रबोधिनी एकादशी कहा जाता है।

प्रबोधिनी एकादशी व्रत के लाभ : अगर आप पूरे विधि विधान से और सच्चे मन से प्रबोधिनी एकादशी का व्रत करते हैं और भगवान विष्णु की पूजा करते हैं तो निश्चित ही भगवान विष्णु की कृपा आप पर होगी और आपने जो भी मनोकामना मांग कर रखी है, वह अवश्य पूरी होगी। व्यक्ति अपनी किसी भी प्रकार की मनोकामना की पूर्ति के लिए प्रबोधिनी एकादशी का व्रत कर सकता है।

तुलसी विवाह का आयोजन : जब प्रबोधिनी एकादशी आती है तो उसी दिन तुलसी विवाह का आयोजन भी होता है। भारत में आज भी ऐसे कई इलाके हैं जहां पर शालिग्राम और तुलसी के पौधे की शादी बिल्कुल सामान्य शादियों की तरह ही काफी धूमधाम से की जाती है और टीवी पर इसका लाइव प्रसारण भी किया जाता है।

आपको बता दें कि, तुलसी को विष्णु प्रिया के नाम से भी बुलाया जाता है। इसीलिए जब भगवान निद्रा से जानते हैं तो सबसे पहले हरीवल्लभा तुलसी की ही सुनते हैं।

पुराणों में ऐसा कहा गया है कि ऐसे माता-पिता जिनकी कोई भी संतान के तौर पर कन्या नहीं है वह तुलसी विवाह करवा करके या फिर इसमें शामिल होकर के कन्यादान के पुण्य की प्राप्ति कर सकते हैं।

सच्ची मदद

संकलनकर्ता - इंदु कौशिक
जयपुर, राजस्थान

'एक नन्हा परिंदा अपने परिवार–जनों से बिछड़ कर अपने आशियाने से बहुत दूर आ गया था। उस नन्हे परिंदे को अभी उड़ान भरने अच्छे से नहीं आता था। उसने उड़ना सीखना अभी शुरू ही किया था ! उधर नन्हे परिंदे के परिवार वाले बहुत परेशान थे और उसके आने की राह देख रहे थे। इधर नन्हा परिंदा भी समझ नहीं पा रहा था कि वो अपने आशियाने तक कैसे पहुंचे?'

'वह उड़ान भरने की काफी कोशिश कर रहा था पर बार–बार कुछ ऊपर उठ कर गिर जाता।' 'कुछ दूर से एक अनजान परिंदा अपने मित्र के साथ ये सब दृश्य बड़े गौर से देख रहा था। कुछ देर देखने के बाद वो दोनों परिंदे उस नन्हे परिंदे के करीब आ पहुंचे। नन्हा परिंदा उन्हें देख के पहले घबरा गया फिर उसने सोचा शायद ये उसकी मदद करें और उसे घर तक पहुंचा दें।

''अनजान परिंदा क्या हुआ? नन्हे परिंदे काफी परेशान हो?''नन्हा परिंदा मैं रास्ता भटक गया हूँ और मुझे शाम होने से पहले अपने घर लौटना है। मुझे उड़ान भरना अभी अच्छे से नहीं आता। मेरे घर वाले बहुत परेशान हो रहे होंगे। आप मुझे उड़ान भरना सीखा सकते है ? मैं काफी देर से कोशिश कर रहा हूँ पर कामयाबी नहीं मिल पा रही है।' 'अनजान परिंदा (थोड़ी देर सोचने के बाद) – जब उड़ान भरना सीखा नहीं तो इतना दूर निकलने की क्या जरुरत थी? वह अपने मित्र के साथ मिलकर नन्हे परिंदे का मजाक उड़ाने लगा।' 'उन लोगो की बातों से नन्हा परिंदा बहुत क्रोधित हो रहा था।' 'अनजान परिंदा हँसते हुए बोला देखो हम तो उड़ान भरना जानते हैं और अपनी मर्जी से कहीं भी जा सकते हैं। इतना कहकर अनजान परिंदे ने उस नन्हे परिंदे के सामने पहली उड़ान भरी। वह फिर थोड़ी देर बाद लौटकर आया और दो–चार कड़वी बातें बोल पुनः उड़ गया। ऐसा उसने पांच– छः बार किया और जब इस बार वो उड़ान भर के वापस आया तो नन्हा परिंदा वहां नहीं था।' 'अनजान परिंदा अपने मित्र से– नन्हे परिंदे ने उड़ान भर ली ना? उस समय अनजान परिंदे के चेहरे पर खुशी झलक रही थी।' 'मित्र परिंदा हाँ नन्हे परिंदे ने तो उड़ान भर ली लेकिन तुम इतना खुश क्यों हो रहे हो मित्र? तुमने तो उसका कितना मजाक बनाया।' 'अनजान परिंदा मित्र, तुमने मेरी सिर्फ नकारात्मकता पर ध्यान दिया। लेकिन नन्हा परिंदा मेरी नकारात्मकता पर कम और सकारात्मकता पर ज्यादा ध्यान दे रहा था। इसका मतलब यह है

कि उसने मेरे मजाक को अनदेखा करते हुए मेरी उड़ान भरने वाली चाल पर ज्यादा ध्यान दिया और वह उड़ान भरने में सफल हुआ।' 'मित्र परिंदा जब तुम्हे उसे उड़ान भरना सिखाना ही था तो उसका मजाक बनाकर क्यों सिखाया?' 'अनजान परिंदा मित्र, नन्हा परिंदा अपने जीवन की पहली बड़ी उड़ान भर रहा था और मैं उसके लिए अजनबी था। अगर मैं उसको सीधे तरीके से उड़ना सिखाता तो वह पूरी जिंदगी मेरे एहसान के नीचे दबा रहता और आगे भी शायद ज्यादा कोशिश खुद से नहीं करता।'

'मैंने उस परिंदे के अंदर छिपी लगन देखी थी। जब मैंने उसको कोशिश करते हुए देखा था तभी समझ गया था इसे बस थोड़ी सी दिशा देने की जरुरत है और जो मैंने अनजाने में उसे दी और वो अपने मंजिल को पाने में कामयाब हुआ। अब वो पूरी जिंदगी खुद से कोशिश करेगा और दूसरों से कम मदद मांगेगा। इसी के साथ उसके अंदर आत्मविश्वास भी ज्यादा बढ़ेगा।' 'मित्र परिंदे ने अनजान परिंदे की तारीफ करते हुए बोला तुम बहुत महान हो, जिस तरह से तुमने उस नन्हे परिंदे की मदद की वही सच्ची मदद है...'

'शिक्षा' : 'मित्रों,सच्ची मदद वही है जो मदद पाने वाले को ये महसूस न होने दे कि उसकी मदद की गयी है। बहुत बार लोग सहायता तो करते हैं पर उसका ढिंढोरा पीटने से नहीं चूकते। ऐसी सहायता किस काम की ! परिंदों की ये कहानी हम इंसानो के लिए भी एक सीख है कि हम लोगों की मदद तो करें पर उसे जताएं नहीं..!!'

मानवीय संबंधो की बुनियाद

भावना, अपेक्षा और मानसिक स्तर के प्रति सतर्कतापूर्ण व्यवहार

डॉ. अजय शुक्ला
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

आधारभूत सम्बन्ध: जीवन में सम्बन्धों के महत्व को समझने के लिए सजगतापूर्ण नजरिया अपनाते हुए कार्यप्रणाली विकसित करने का व्यापक आधार व्यक्ति के व्यवहार पर निर्भर करता है। सामान्य रूप से विचार करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्तिगत् जीवन की स्थिति स्वयं के सम्बन्ध में किस प्रकार से गतिशील है। व्यक्तिगत् एवं सामाजिक परिवेश के अन्तर्गत् मानवीय सम्बन्धों की बात की जाती है तो आपसी संवाद का केन्द्र बिन्दु दूसरे व्यक्तियों को बनाने का प्रयास किया जाता है। व्यक्ति की निजी सोच यह स्वीकार करने के लिए कभी तत्पर नहीं हो पाती है कि आपसी सम्बन्धों की कड़वाहट के लिए वह स्वयं भी उत्तरदायी हो सकता है। जब व्यावहारिकता की कसौटी पर निकटता का आभास सम्बन्धों में होने लगता है तब यह भाव प्रकट किया जाता है कि इस प्रगाढ़ता की स्थिति हेतु वह व्यक्तिगत् रूप से जिम्मेदार है। आपसी सम्बन्धों के विभिन्न प्रयास करने से पूर्व स्वयं का स्वयं के साथ सम्बन्ध होना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अनिवार्य है। प्रायः व्यक्ति के द्वारा यह तय किया जाता है कि वह अपने बारे में क्या सोच रहा है? और यह मनन–चिन्तन की प्रक्रिया व्यावहारिक जगत् में प्रकट होने के लिए कहाँ तक तैयार है? यदि अन्तर्मन की स्वीकृति से जुड़ी स्थिति, भाव एवं विचार पक्ष के सम्बन्ध में स्पष्ट है तब उसके प्रभाव की स्थितियों पर गौर करते हुए परिणाम तक पहुँचा जा सकता है। स्वयं की सम्पूर्ण अभिव्यक्ति का प्रथम पायदान अर्न्तजगत् की भावनात्मक पृष्ठभूमि पर निर्भर रहता है क्योंकि यहीं से व्यक्त भाव का स्वरूप निर्धारित होता है। जीवन की विविधता में सम्बन्धों को लेकर अधिकतमम् वाद–विवाद की स्थिति निर्मित होती है और आरोप–प्रत्यारोप तक पहुँचते–पहुँचते सम्बन्ध विच्छेद हो जाते हैं। सम्पूर्ण घटनाचक्र पर पश्चाताप होने के पश्चात् यह तय किया जाता है कि आखिर गलती कहाँ और किससे हो गयी, जिससे नौबत यहाँ तक आ गयी।

मानवीय सम्बन्धों की गतिशीलता का सिलसिला उस समय तक अच्छा चलता रहता है जब तक व्यक्ति के द्वारा सोचने एवं समझने की क्रिया को विधिवत् रूप से अपनाते हुए निर्णय लिए जाते हैं। व्यक्तिगत् सम्बन्धों को बनाते समय अथवा समाजिक रिश्तों को निभाते समय सबसे अहम् बात भावनाओं के साथ अपेक्षा एवं मानसिक स्तर का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक होता है। अधिकतर मामलों में यह पाया जाता है कि व्यक्तित के द्वारा पूर्ण सतर्कता से व्यवहार करने की कोशिश की गयी परन्तु दूसरे व्यक्तियों को किसी न किसी रूप में उत्पन्न स्थिति का आघात पहुँच ही गया। आधारभूत सम्बन्धों की बुनियाद तभी स्थायी तौर पर टिकी रह सकती है जबकि भावना और व्यवहार के मध्य मानवीय पक्ष को स्वीकार कर लिया जाए।

भावनात्मक निष्ठा: व्यावहारिक जगत् में सम्बन्धों के संदर्भ की बात उठने पर संवेदना से जुड़ी भानात्मक पक्ष की पैरवी किया जाना आवश्यक हो जाता है। मानवता की रक्षा करना प्रत्येक व्यक्ति का परम् कर्त्तव्य होता है इसलिए सर्वप्रथम मानवीय भावनाओं को सम्मान प्रदान करने के साथ उसके संरक्षण के प्रयास किये जाते हैं। सामान्य तौर पर व्यक्तिगत् एवं सामूहिक व्यवहार के समय इस मन्तव्य को अन्तर्मन से समझने की चेष्ठा की जाती है जिसमें किसी भी प्रकार से किसी व्यक्ति की भावना को ठेस नहीं पहुँचाने की स्थिति बनी रहे। कई बार यह देखने में आता है कि किसी व्यक्ति के प्रति आन्तरिक श्रद्धा का निर्माण तभी हो पाता है जब दोनों पक्षों द्वारा एक दूसरे की भावनाओं का सम्मान किया जाए। इस प्रकार की स्थिति विश्वसनीयता के मामले में भी निर्मित होती है जिसके अन्तर्गत् आपसी सम्बन्धों की बुनियाद पूर्णतः विश्वास पर निर्भर होती है और इसका प्रादुर्भाव भावना से होकर गुजरता है। भावनात्मक स्वरूप की विवेचना का सबल एवं दुर्बल पक्ष उस समय प्रकट हो जाता है जब किसी व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्तियों के व्यवहार को लेकर अपनी अभिव्यक्ति में विविध प्रकार की भावनाओं को सम्मिलित करते हुए विचार किया जाता है, जिसके फलस्वरूप सकारात्मक एवं नकारात्मक भावनाओं का निर्माण व्यक्तिगत् एवं सामूहिक तौर पर उत्पन्न होना स्वाभाविक हो जाता है। मानवीय संदर्भ को रेखाँकित करते समय भावनात्मक निष्ठा को बनाये रखना वर्तमान परिवेश में एक चुनौतीपूर्ण कार्य बन गया है जिसकी पुष्टि जीवन के असंतोष को देखकर की जा सकती है। भावनाओं की प्रति संवेदनशील हो जाना व्यक्तिगत् स्वभाव का हिस्सा हो सकता है, परन्तु जीवन में स्वाभिमान और अहम् को अपनी हैसियत के अनुसार उपयोग करते हुए समयानुसार प्रकट करने की लालसा सहज भावों को विरोधाभासी बनाने से नहीं चूकती है।

आपसी सम्बन्धों को मजबूती प्रदान करने में भावनात्मक निष्ठा का बड़ा योगदान रहता है वहीं दूसरी ओर इन भावनाओं का सुनिश्चित ध्यान नहीं रखने पर गहरे आघात की स्थिति निर्मित होते देर नहीं लगती है। व्यक्तिवादी दृष्टिकोंण को अपना लेने के कारण केवल मैं और मेरा के अतिरिक्त व्यक्ति को कुछ भी दिखायी नहीं देता है जिसके कारण सामान्य व्यवहार में दूसरे व्यक्तियों की भावनाओं का सम्मान नहीं कर पाने की घटना सर्वविदित हो जाती है। भावनात्मक निष्ठा की उपयोगिता को सजगता से अनुभव करने पर यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्ति की भावनाओं का सहज सम्मान या विरोध करने की नियमित गतिविधि के अतिरिक्त दोनों पक्षों के भाव की टकराहट से निकल समाधान की दिशा में अग्रसर होने का प्रयास करना चाहिए। सामाजिक सम्बन्धों के अन्तर्गत भावनात्मक स्वरूप की निष्ठा को अक्षुण्य बनाये रखने हेतु विश्वास के धरातल पर खरा उतरने के मानदण्ड निर्धारित करने के साथ–साथ उसके दुरूपयोग न होने की संभावना पर पूर्ण विचार कर लेना चाहिए। व्यक्तिगत् जीवन से लेकर सामूहिक व्यवहार की सहज स्वीकारोक्ति, भावनात्मक निष्ठा की गहरायी में निहित होती है जिसका प्रकटीकरण अति लघु व्यवहार की सम्मानजनक स्थिति से लगाया जा सकता है।

अपेक्षित संतुष्टि: सम्बन्धों की बुनियादी अवधारणा छोटी–छोटी अपेक्षाओं से जुड़ी होती हैं जिनकी पूर्णता अथवा अपूर्णता का स्वरूप निर्धारित करना कठिन होता है। कई बार यह देखने में आता है कि प्रत्यक्ष रूप से कोई व्यक्तिगत् सम्बन्ध नहीं होने के बावजूद भी मानवता को ध्यान में रखकर की जाने वाली मदद् अन्तर्मन को संतुष्टि प्रदान कर देती है। जब व्यक्ति किसी असहाय स्थिति में होता है तो उस समय सहायता के लिए निकली पुकार जब संवेदना के चरम् तक पहँच जाती है तब ऐसे में किसी अनजान से मिलने वाला सहयोग एक अविस्मरणीय दृष्टाँत बन जाता है। आपसी सम्बन्धों के अस्तित्व को उस स्थिति में आघात पहुँचता है जबकि अपेक्षा के अनुकूल मदद् नहीं मिल पाती है। सामान्य तौर पर यह कहा जाता है कि जिसे अपना मानते हुए स्वीकार कर लिया था वो लोग आवश्यकता के समय पीछे हट गये और जिन्हें हम जानते भी नहीं थे उन्होंने आकर हमारी सहायता कर दी। मानवीय प्रवृत्ति का व्यावहारिक सामन्जस्य स्वयं के सानिध्य की अनुभूति करते हुए सुखद एवं दुःखद परिदृश्यों से सम्बद्ध रहता है जिसमें किसी बाहरी हस्तक्षेप की गुँजाईश लगभग न्यूनतम् ही संभव हो पाती है। प्रायः व्यक्ति के द्वारा अपने अनुभवों को अन्ततः असहनीय पीड़ा की मनः स्थिति से जोड़कर तथा आनंद के क्षणों में सहभागी बने लोगों के सहारे अपेक्षित संतुष्टि को ढूँढ़ने का प्रयास किया जाता है।

व्यक्तिगत् एवं सामाजिक सम्बन्धों की पुष्टि जब इस तथ्य के सहारे अभिव्यक्त होती है जिसमें व्यक्ति द्वारा सर्व को संतुष्ट नहीं कर पाने की स्थिति का उल्लेख किया जाता है तब उस स्थिति में असमर्थता का बोध कराने की कोशिश सम्पन्न की जाती है। किसी व्यक्ति के बारे में यह पूर्वानुमान लगा लेना कि उसके द्व ारा मेरे साथ कम से कम इस प्रकार का व्यवहार तो किया जाएगा जिससे मुझे अथवा मुझसे जुड़े व्यक्तियों को किसी भी प्रकार की पेरशानी नहीं होगी, ऐसी मानसिकता प्रायः एकाँगी स्थिति के बोध का परिचायक होती है। आपसी सम्बन्धों के संदर्भो का उल्लेख इसलिए किया जाता है जिससे विश्वास की नींव का आस्था के सिलसिले में उपयोग किया जा सके और किसी भी स्थिति में न्यूनतम् मदद् की स्थिति यथावत् बनी रहे। व्यावहारिक सम्बन्धों की कसौटी पर अधिकतम् अपेक्षा के कारण विरोधाभास की स्थिति निर्मित हो जाती है और व्यक्तिगत् व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन किया जाने लगता है जिसके अन्तर्गत् यह कहा जाता है कि मैंने

तो इनके साथ ऐसा किया था और इन्हें भी इस प्रकार से अथवा इतना तो किसी भी रूप में ध्यान रखते हुए सहयोग करना ही था। स्वयं की विचारगत् एवं भावना प्रधान सोच किसी भी स्थिति में यह स्वीकार नहीं कर पाती है कि यहाँ मेरे साथ निश्चित तौर पर जो कुछ व्यवहार संपादित किया जा रहा है अथवा सामने वाले व्यक्ति द्वारा उसकी क्षमता और सामर्थ्य के अनुसार सहयोग किया जा रहा है वह किसी प्रतिरोध का परिणाम नहीं है बल्कि सामान्य जीवन की गतिविधि है। जीवन में संतुष्टि का सिद्धांत इस बात की स्वीकृति नहीं देता है जिसके अन्तर्गत् सम्पूर्ण व्यावहारिक पक्षों के आँकलन को महत्व प्रदान करते हुए न्यूनतम् और अधिकतम् की स्थिति को मुद्दा बनाकर गतिशीलता का प्रयास किया जाए। सकारात्मक दृष्टिकोंण को विकसित करने का सर्वाधिक लाभ यह होता है जिसमें संतुष्टि की स्थिति को स्वीकारने की बात अपेक्षा से रहित होकर की जाती है।

मर्यादित स्तर: व्यक्तिगत् एवं सामाजिक जीवन के परिप्रेक्ष्य में व्यवहार करते समय मानसिक स्तर का ध्यान अवश्य रखना चाहिए जिससे आपसी सम्बन्धों की मधुरता कायम रह सके। सामान्यतः व्यक्ति के द्वारा अपनी आदतों तथा अभिरूचियों के अनुसार व्यावहारिक सम्बन्ध बनाने की प्रवृत्ति पायी जाती है। स्वयं से मिलती –जुलती सामाजिक और शैक्षणिक गतिविधियों के आधार पर सम्बन्धों की प्रगाढ़ता के प्रयास व्यक्तिगत् स्तर पर पूर्ण करने की कोशिशें आज भी समाज में निरन्तर जारी हैं। जब कभी सम्बधों की निर्बाध गतिशीलता हेतु विभिन्न मर्यादित सीमाओं का निर्धारण किया जाता है तो उस समय एक दूसरे के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर व्यवहार करने की सलाह दी जाती है।

आपस में व्यवहार करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक होता है जिसके अन्तर्गत् एक व्यक्ति द्वारा अभिव्यक्त किये जाने वाले विचार एवं भावनाओं का स्तर क्या होना चाहिए जिससे दूसरे पक्ष को वह बात अथवा मन्तव्य का स्पष्ट आभास समझ के स्तर पर सहजता से अनुभव में आ सके। अधिकतर सामाजिक सम्बन्धों की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन यह बताता है कि व्यक्तिगत् व्यवहार से लेकर सामाजिक संरचानाओं से सम्बद्ध अलग–अलग स्थितियों के सम्बन्धों में मानसिक स्तर के प्रति पर्याप्त रूप से ध्यान नहीं दिया जाता है। सामाजिक सम्बन्धों के अन्तर्गत् जब अपने साथ दूसरे व्यक्तियों के मानसिक स्तर का ज्ञान कर लिया जाता है तब वहाँ सम्बन्धों की वास्तविक बुनियाद रखी जा सकती है। सम्बन्ध बनाने की स्थितियों के लिए यह तर्क दिया जाता है कि यह आसान कार्य है जबकि निभाने की प्रक्रिया अत्यन्त कठिन है क्योंकि इसमें त्याग की आवश्यकता पड़ती है। व्यावहारिकता की पृष्ठभूमि में एक बात यह भी कही जाती है कि किसी बात को कहने से पहले कई बार सोचो क्योंकि एक बार तीर कमान से निकल गया तो वह फिर वापस लौटकर नहीं आता है। यहाँ एक बात और समझने की है जिसमें केवल विचार और भावनाओं का मुद्दा नहीं है बल्कि व्यक्ति से जुड़े सभी पहलुओं पर गौर करते हुए व्यवहार का निर्धारण करने की स्थिति से है जो आपसी सम्बन्धों की गहरायी को और भी मजबूती प्रदान करने में सहायक सिद्ध हो सकेंगे। एक दूसरे की भावनाओं का ध्यान रखते हुए जब आपस में व्यवहार करने का प्रयास किया जाता है तब दो व्यक्तियों के सम्बन्धों में किसी प्रकार की गलतफहमी उत्पन्न नहीं होती है। स्वयं के व्यवहार का निर्धारण नहीं कर सकने की स्थिति में अन्य व्यक्तियों के साथ किसी व्यक्तिगत् एवं सामाजिक सम्बन्धों की स्वस्थ परम्परा का पालन करना असंभव हो जाता है। निजी व्यवहार जब पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश में परिवर्तित होता है तब सम्बन्धों की बुनियाद का निर्माण संभव हो जाता है और सजगता के साथ व्यवहार करने की प्रेरणा प्राप्त होने लगती है।

सजगतापूर्ण व्यवहार: मानवीय पक्षधरता को जब रेखाँकित करने की बात होती है तब सम्बन्धों को बनाने के लिए सकारात्मक व्यवहार को महत्व प्रदान किया जाता है। जीवन में विभिन्न स्थितियों के मध्य स्वयं के सम्बन्धों की बुनियादी अवधारणा वर्तमान परिदृश्य में सजगतापूर्ण व्यवहार पर निर्भर करती है। व्यावहारिक जगत् की व्यवस्था का अध्ययन भावनात्मक निष्ठा को प्रतिपादित करने की चेष्ठा करता है लेकिन भावना के साथ विवेक सम्मत सम्बन्धों को ही सामाजिक स्वीकृति अन्ततः प्राप्त हो पाती है। आपसी सम्बन्धों के निर्धारण में किसी भी प्रकार से अपेक्षित संतुष्टि प्राप्त हो जाए यह संभव नहीं हो पाता है,

क्योंकि व्यवहार के प्रति न्यूनतम् या अधिकतम् की स्थिति सहज सम्बन्धों की गतिशीलता में प्रायः बाधा बन जाया करती है। व्यक्तिगत् एवं सामाजिक सम्बन्धों के निर्वहन को किस प्रकार से निर्देशित किया जाए जिससे एक दूसरे व्यक्ति के मानसिक स्तर का स्पष्ट रूप से पता चल जाए और जो अन्ततः सजगतापूर्ण व्यवहार को अपनाने का ठोस कारण भी बन सके। एक व्यक्ति सकारात्मक व्यवहार से यह दावा कर सकता है कि उसके जीवन में आधारभूत सम्बन्धों का निर्धारण इसलिए संभव हो सका क्योंकि उसके द्वारा मनन–चिन्तन की प्रक्रिया के साथ आपसी समझ को हमेशा महत्व प्रदान किया गया है। संवेदनाओं के स्तर पर कार्य करते समय आपसी विश्वास को बनाये रखते हुए आत्मसम्मान के प्रति सजग दृष्टि और दूसरे की भावनाओं को किसी भी परिस्थिति में आघात नहीं पहुँचाने की मनःस्थिति भाव–जगत् की निष्ठा का प्रमाण होती है। स्वयं को संतुष्ट करने और अन्य लोगों को भी संतुष्टि प्रदान करने की पद्धति सबसे पहले भेद दृष्टि को कम करने में मददगार साबित होती है जिसके परिणाम स्वरूप सहज व्यवहार से जुड़ी अपेक्षाओं की पूर्ति की जा सकती है। यदि विधिवत तरीके से प्रयास किया जाए तो निश्चित ही आपसी व्यवहार के मध्य मानसिक स्तर का आँकलन संभव हो सकता है जो अन्ततः मिथ्या धारणाओं को दूर करते हुए सम्बन्ध निभाने में सहयोगी बन सकता है। व्यक्तिगत् अथवा सामाजिक सम्बन्धों की गुणवत्ता को बनाये रखने में सकारात्मक व्यवहार के निरन्तर योगदान को किसी भी स्थिति में भुलाया नहीं जा सकता है। अतः आपसी सम्बन्धों में भावनात्मक निष्ठा के साथ अपेक्षित संतुष्टि की स्थिति को तभी कायम रखा जा सकता है जबकि जीवन में मानसिक स्तर के प्रति सतर्कतापूर्ण व्यवहार को मानवीय सम्बन्धों की बुनियाद के तौर पर स्वीकार कर लिया जाए।

GSS FOUNDATION

Goraksh Shaktidham Sevarth Foundation

भारत रत्न
महामना पंडित मदन मोहन मालवीय जी
एवं श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी
की जयंती पर्व पर इन्दौर (मध्यप्रदेश) में

द्वितीय

अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह

25 दिसंबर 2022
को संपन्न होने जा रहा है

भारत वर्ष के विभिन्न प्रांतों से
सारस्वत सम्मान हेतु
प्रविष्टियां आमंत्रित हैं।

यह सारस्वत सम्मान राष्ट्र निर्माण एवं जनकल्याण को समर्पित हिंदी भाषी साहित्यकारों, चिकित्सकों, लघु-उद्योगपतियों, लेखकों, कवियों, शिक्षकों, शोधार्थियों को प्रदान किया जाएगा, जो अपनी अविस्मरणीय प्रतिभा-सेवा के द्वारा राष्ट्र की शैक्षणिक, आर्थिक, तकनीकी, सामाजिक, कला एवं संस्कृति की उन्नति में अपना निरंतर योगदान दे रहे हैं।

आमंत्रित प्रतिभागियों को समारोह मंच पर आकर्षक सम्मान पत्र, मोमेंटो एवं शाल प्रदान कर सम्मानित किया जाएगा।

प्रविष्टियाँ भेजने की अंतिम तिथि 30 नवंबर 2022

प्रविष्टि का प्रारूप हमारी वेबसाईट (www.gssfoundation.org) पर भी उपलब्ध है।

संपर्क सूत्र : योगी शिवनंदन नाथ
Ph. : 0731-4918681, M. : 7415410516 | ईमेल : info.gssfoundation.org

मुख्य प्रायोजक

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

www.gssfoundation.org | इंदौर (म.प्र.) 452009

देव दीपावली : देवताओं का पर्व

आकांक्षा यादव
पोस्टमास्टर जनरल आवास,
कैण्ट प्रधान डाकघर, नदेसर,वाराणसी

मानव जीवन में प्रकाश की महत्ता किसी से छुपी नहीं है। दुनिया के कई देशों में भिन्न–भिन्न रूपों में प्रकाश–पर्व मनाये जाते हैं। अंधकार पर प्रकाश की विजय का यह पर्व समाज में उल्लास, भाई–चारे व प्रेम का संदेश फैलाता है। भारतवर्ष में मनाए जाने वाले सभी त्यौहारों में दीपावली का सामाजिक और धार्मिक दोनों दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व है। इसे दीपोत्सव भी कहते हैं। **'तमसो मा ज्योतिर्गमय'** अर्थात् **'अंधेरे से ज्योति अर्थात प्रकाश की ओर जाइए'** यह भारतीय संस्कृति का मूल है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में दीवाली मनाने के कारण एवं तरीके अलग हैं पर सभी जगह कई पीढ़ियों से यह त्योहार चला आ रहा है। यह पर्व सामूहिक व व्यक्तिगत दोनों तरह से मनाए जाने वाला ऐसा विशिष्ट पर्व है जो धार्मिक, सांस्कृतिक व सामाजिक विशिष्टता रखता है।

हर वर्ष कार्तिक अमावस्या तिथि पर दीपावली का त्योहार मनाया जाता है और इसके 15 दिनों के बाद कार्तिक पूर्णिमा तिथि पर देव दीपावली का उत्सव मनाया जाता है। दीपावली तो केवल नश्वर लोगों के लिए है। देव दीपावली देवताओं का पर्व है। हिंदू धर्म में पूर्णिमा का विशेष स्थान होता है और इनमें कार्तिक माह में आने वाली पूर्णिमा का तो विशेष महत्व है। ऐसी मान्यता है कि कार्तिक पूर्णिमा के दिन देवी–देवता पृथ्वी पर आकर दीपावली मनाते हैं। इस मौके पर गंगा घाटों को सजाया जाता है और खूबसूरत रंगोली व लाखों दीये जलाकर इस त्योहार को हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। धार्मिक ग्रंथों की मानें तो देव दीपावली के दिन गंगा नदी में स्नान ध्यान करने से मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

देव दीपावली मनाने के पीछे मान्यता है कि एक समय में तीनों लोकों में त्रिपुरासुर नामक राक्षस का राज चलता था। उसके अत्याचार से पीड़ित देवतागणों ने भगवान शिव के समक्ष त्रिपुरासुर राक्षस से उद्धार की विनती की। भगवान शिव ने कार्तिक पूर्णिमा के दिन उस राक्षस का वध कर उसके अत्याचारों से सभी को मुक्त कराया और त्रिपुरारी कहलाये। इससे प्रसन्न देवताओं ने स्वर्ग लोक में दीप जलाकर दीपोत्सव मनाया था, तभी से कार्तिक पूर्णिमा को देव दीपावली मनायी जाने लगी।

देव दीपावली मुख्य रूप से काशी में गंगा नदी के तट पर मनाई जाती है। इस दिन काशी नगरी में एक अलग ही उल्लास देखने को मिलता है। हर ओर साज–सज्जा की जाती है और गंगा घाट पर हर ओर मिट्टी के दीपक प्रज्वलित किए जाते हैं। उस समय गंगा घाट का दृश्य भाव विभोर कर देने वाला होता है। लोकाचार की परंपरा होने के कारण वाराणसी में इस दिन गंगा किनारे बड़े स्तर पर दीपदान किया जाता है। देश–विदेश से तमाम श्रद्धालु और पर्यटक इसमें शामिल होने और इसका साक्षी बनने के लिए पहुँचते हैं। विभिन्न घाटों विशेषकर दशाश्वमेघ घाट पर पर इस दिन भव्य गंगा आरती देखते ही बनती है।

वाराणसी या बनारस (जिसे काशी के नाम से भी जाना जाता है) दुनिया के सबसे पुराने जीवित शहरों में से एक है। पौराणिक कथाओं के अनुसार, काशी नगरी की स्थापना भगवान शिव ने लगभग 5,000 वर्ष पूर्व की थी। काशी की भूमि सदियों से एक महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। ये हिन्दुओं की पवित्र सप्तपुरियों में से एक है। प्राचीनतम वेद ऋग्वेद से लेकर स्कंद पुराण, रामायण एवं महाभारत सहित कई ग्रन्थों में इस नगर का उल्लेख आता है। बनारस की भूमि सदियों से एक महत्वपूर्ण धार्मिक स्थल के रूप में प्रसिद्ध है। अंग्रेजी साहित्य के लेखक मार्क ट्वेन, जो बनारस की किंवदंती और पवित्रता से रोमांचित थे, ने एक बार लिखा था : **"बनारस इतिहास से भी पुराना है, परंपरा से पुराना है, किंवदंती से भी पुराना है और सभी के साथ दोगुना दिखता है।"**

वाराणसी अपनी प्राचीन विरासत के साथ–साथ अध्यात्म, साहित्य, संस्कृति, कला और उत्सवों के लिए भी जाना जाता है। ज्ञान, दर्शन, संस्कृति, देवताओं के प्रति समर्पण, भारतीय कला और शिल्प यहाँ सदियों से फले–फूले हैं। भारत की पवित्र नदी गंगा भी यहाँ से प्रवाहित होती है, जिसके किनारे घाटों पर दीप प्रज्ज्वलन एवं दीप दान करके लोग आलोकित होते हैं। दीपावली के 15 दिन बाद वाराणसी में गंगा घाटों पर **'देव दीपावली'** मनाने की परंपरा रही है। ऐसी मान्यता है कि कार्तिक मास की पूर्णिमा के दिन देवतागण स्वर्गलोक से उतरकर दीपदान करने पृथ्वी पर आते हैं, इसलिए इस दिन को देव दीपावली के नाम से भी जाना जाता है। देवताओं के साथ इस उत्सव में परस्पर सहभागी होते हैं– काशी, काशी के घाट, काशी के लोग। देवताओं का उत्सव देव दीपावली, जिसे काशीवासियों ने सामाजिक सहयोग से महोत्सव में परिवर्तित कर विश्वप्रसिद्ध कर दिया।

काशी में देव दीपावली उत्सव मनाये जाने के सम्बन्ध में मान्यता है कि राजा दिवोदास ने अपने राज्य काशी में देवताओं के प्रवेश को प्रतिबन्धित कर दिया था। ऐसे में कार्तिक पूर्णिमा के दिन भगवान शिव ने रूप बदल कर काशी के पंचगंगा घाट पर आकर गंगा स्नान कर ध्यान किया। यह बात जब राजा दिवोदास को पता चला तो उन्होंने देवताओं के प्रवेश प्रतिबन्ध को समाप्त कर दिया। इस दिन सभी देवताओं ने काशी में प्रवेश कर दीप जलाकर दीपावली मनाई थी। एक अन्य मान्यतानुसार, देव उठनी एकादशी पर भगवान विष्णु चातुर्मास की निद्रा से जागते हैं और चतुर्दशी को भगवान शिव। इसी खुशी में देवी–देवता काशी में आकर घाटों पर दीप जलाते हैं और खुशियाँ मनाते हैं। इस उपलक्ष्य में काशी में विशेष आरती का आयोजन किया जाता है।

काशी में देव दीपावली का वर्तमान स्वरूप पहले नहीं था। पहले लोग कार्तिक पूर्णिमा को धार्मिक माहात्म्य के कारण घाटों पर स्नान–ध्यान को आते और घरों से लाये दीपक गंगा तट पर रखते व कुछ गंगा की धारा में प्रवाहित करते थे, घाट तटों पर ऊँचे बाँस–बल्लियों में टोकरी टाँग कर उसमें आकाशदीप जलाते थे जो देर रात्रि तक जलता रहता था। इसके माध्यम से वे धरती पर देवताओं के आगमन का स्वागत एवं अपने पूर्वजों को श्रद्धांजलि प्रदान करते थे। धीरे–धीरे देव दीपावली ने एक दिव्य व भव्य त्यौहार का रूप धारण कर लिया। पंचगंगा घाट पर चंद दीपों की टिमटिमाहट के साथ शुरू हुई काशी की देव दीपावली अब लोकल से ग्लोबल हो चुकी है। आसमान के सितारों के जमीं पर उतर आने का आभास देने वाली काशी की देव दीपावली को देखने देश–दुनिया से बड़ी संख्या में श्रद्धालु और पर्यटक आते हैं। इस दिन, धार्मिक एवं सांस्कृतिक नगरी काशी के ऐतिहासिक घाटों पर कार्तिक पूर्णिमा को माँ गंगा की धारा के समानांतर असंख्य दीप प्रवाहमान होते हैं। असंख्य दीपकों और झालरों की रोशनी से रविदास घाट से लेकर आदिकेशव घाट और वरुणा नदी के तट एवं घाटों पर स्थित देवालय, महल, भवन, मठ–आश्रम जगमगा उठते हैं, मानो काशी में पूरी आकाश गंगा ही उतर आयी हों। गंगा आरती के बीच मिट्टी के लाखों दीपक गंगा नदी के पवित्र जल पर तैरते हैं। विभिन्न घाट और आसपास के राजसी आलीशान इमारतों की सीढियाँ, धूप और मंत्रों के पवित्र जाप के आह्वान से लोगों में एक नए उत्साह का निर्माण करती हैं।

काशी की देव दीपावली न सिर्फ सांस्कृतिक और धार्मिक, बल्कि पर्यटन के लिहाज से भी महत्त्वपूर्ण है। देश–दुनिया से तमाम लोग इस दिन काशी में गंगा घाटों के अद्भुत दृश्य को निहारने और आत्मसात करने आते हैं। विभिन्न घाटों पर वैदिक मंत्रोच्चारण के बीच गंगा आरती, दीप दान, सांस्कृतिक कार्यक्रमों के बीच यह कल्पना करके ही हृदय हर्ष और उल्लास से भर जाता है कि जब काशी में गंगा के 84 घाटों पर एक साथ लाखों दीप प्रज्वलित होते होंगे तो यह दृश्य कितना मनोरम होता होगा। देव दीपावली सिर्फ उत्सव भर नहीं है, बल्कि प्रकृति के सान्निध्य में दीपों के प्रज्ज्वलन के साथ–साथ यह स्वयं को भी आलोकित करने का पर्व है। तभी तो यहाँ से कुछ दूर स्थित सारनाथ में भगवान बुद्ध ने भी ज्ञान देते हुए कहा था– **अप्प दीपो भव:।**

मैं सुकुमारी नाथ बन जोगू

डॉ. सन्तोष खन्ना
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक :
महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

समूची भारतीय चिंतन परम्परा और साहित्य क्षेत्र में रामचरितमानस में प्रतिपादित महा मानव मूल्य आज भी उतने ही प्रासांगिक है जिसने वह उस काल और परिवेश विशेष में थे जब उसकी रचना हुई थी बल्कि यह भी कहा जा सकता है कि आज के उपभोक्तावाद, बाजारवाद, परस्पर प्रतिस्पर्द्धा और रिश्तों की सूखती सलिला के संदर्भ में तुलसी द्वारा प्रतिपादित हर विचार और सिद्धांत और भी अधिक प्रासांगिक हो उठे हैं। आज भारतीय मानस भारत की प्राचीन समृद्ध संस्कृति से विमुख हो आयातित सांस्कृतिक विचारधारा और जीवन शैली को गर्व से अपना रहा है इसका परिणाम यह हुआ है कि समाज में सब और हिंसा, अपराध, अराजकता और अफरातफरी का माहौल बन चुका है। परिवार पद्धति भी विघटन के कगार पर पहुंच चुकी है। ऐसे में अब भी भारतीय मानस रामचरितमानस में दिग्दर्शक मार्ग पर चलकर शांति और आनंद को प्राप्त कर सकता है।

तुलसीदास के कीर्ति स्तंभ रामचरितमानस में राम और सीता का ऐसा अनोखा चरित्र चित्रण है कि उसमें विश्वजनीन सभी मर्यादाओं और मूल्यों का समावेश है। राम आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति और आदर्श राजा के साथ आदर्श दुश्मन भी हैं। तुलसी के राम मर्यादा पुरुषोत्तम हैं तो 'वह निर्गुण और सगुण, निराकार और साकार, अव्यक्त और व्यक्त, अंतर्यामी और बहिर्यामी, गुणातीत और गुणश्रय हैं। स्वरुप की दृष्टि से जीव और ईश्वर में अभेद है अतः वह ईश्वर की भांति ही सत्य, चेतन और आनंद में है इसीलिए राम के चरित्र के संदर्भ में ही कहा गया है कि रामकथा भारत की आदि कथा है जिसे भारतीय संस्कृति का रूपक कहा जा सकता है इसलिए यहां सभी पात्र भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को महिमा प्रदान करते दिखाई देते हैं।' रामकथा के नारी पात्रों विशेषतया सीता में भारतीय मूल्यों के प्रति असीम आस्था है। वह त्याग की प्रतिमूर्ति है, आदर्श पतिव्रता है ,और विवेकवान, समर्पण

शील और कर्तव्य पारायण और युग धर्म की प्रतीक हैं। वस्तुतः यह भी कहा जा सकता है कि इन पात्रों के माध्यम से मानस में मर्यादा और अमर्यादा के बीच ,शुद्ध और अशुद्ध भावना के बीच, शुद्ध और परपंची भक्ति के बीच, सरल और जटिल जीवन के बीच अनवरत संघर्ष चलता है जिसे तुलसीदास ने अपने भिन्न–भिन्न पात्रों के माध्यम से चित्रित किया है।

सीता का चरित्र अनुपम और अतुलनीय है। समूची भारतीय साहित्य परम्परा में सीता जैसा कोई चरित्र और व्यक्तित्व नहीं मिलता जिसमें अनन्त गुणों का समुच्चय हो। महाकवि तुलसीदास ने सीता को एक तरफ जगत जननी बताया है और दूसरी और वह भारतीय नारी का प्रतीक है। मानस में और राम साहित्य के अन्य ग्रंथों के अनुशीलन से यह कह सकते हैं कि सीता की कर्मठता और संघर्ष राम से भी कहीं अधिक है। सीता अपने जीवन में शक्ति और भक्ति दोनों का प्रतीक है। राम का संघर्ष रावण विजय तक अधिक है और अयोध्या वापस आने पर और राज्य अभिषेक के पश्चात सीता के जीवन के संघर्ष का एक नया अध्याय आरम्भ होता है जब उसे गर्भावस्था में ही वन में भेज दिया जाता है। यद्यपि सीता को बनवास में भेजने के बाद राम ने राजा रहते हुए भी अपने समूचे भौतिक सुखों को परित्याग कर दिया था कि इस संदर्भ में राम का त्याग सीता के जीवन संघर्ष के समक्ष फीका नजर आता है इसलिए भी जब राम को बनवास मिला तो उनके साथ उनकी तपाशील और त्यागमयी पत्नी सीता और राम से अतीव प्रेम करने वाले प्रिय भाई लक्ष्मण भी साथ गये थे।

जब राजा दशरथ कैकेई के कारण राम को चौदह वर्ष का वनवास देते हैं तो राम उनके आदेश शिरोधार्य कर वनगमन की तैयारी करते हैं। जब सीता जी को पता चलता है तो वह भी राम के साथ वनगमन करना चाहती है परंतु राम उसे अयोध्या में रहने के लिए कहते हैं। उस समय राम सीता को वनगमन न करने के बारे में समझाते हैं, तुलसीदास जी ने राम के माध्यम से सीता को समझाने के लिए जो कारण दिये, उन्हें सुन कर सीता जी विह्वल हो अपनी ओर से कारण बताती हैं, यह राम – सीता संवाद इतना अनोखा औरअनुपम है जिससे दोनों का एक दूसरे के प्रति प्रेम की पराकाष्ठा परिलक्षित होती है।

राम जी सीता को उनके साथ बन में न जाने के लिए कई प्रकार से समझाते हैं। वह कई प्रकार की बातें कहते हैं तर्क देते हैं किंतु सीता जी उनकी हर बात का विवेकशील और सारगर्भित उत्तर देती हैं। सीता के वे वचन और तर्क इतने अकाट्य हैं कि राम जी के लिए अंततः सीता की बात मानने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं बचता। सीता जी द्वारा पति के साथ वनगमन के लिए दिए गए कारणों का विश्लेषण करें तो उससे यही निष्कर्ष निकलता है कि सीता अपने पति से अनन्य प्रेम करने वाली पत्नी है। वह पति पारायणा विवेकशील, बहुविज्ञ, बुद्धिमान, साहसी, दृढ़ निश्चय स्वतंत्रता चेता स्त्री है उन्हें उनकी इच्छा के विरुद्ध किसी तरह से भी बाध्य नहीं किया जा सकता। सीता जैसा विशाल, उदात्त और साहसी चरित्र विश्व के किसी अन्य साहित्य में नहीं मिलेगा। आइए सीता जी के चरित्र के आकलन के लिए वन गमन के प्रसंग में राम सीता के बीच में हुए वार्तालाप पर एक नजर डालें।

रामजी यद्यपि मां कौशल्या के सामने सीता जी से कुछ कहते हुए सकुचाते हैं परंतु समय की संवेदनशीलता को देखते हुए वह सीता को वन गमन ना करने के लिए समझाते हुए कहते हैं :

'मेरी और तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम यही अयोध्या में रह कर सास ससुर की सेवा करो और जब मां मेरी याद में विह्वल हो जाए तो उन्हें कई तरह की गाथाएं सुना कर उन्हें धीरज बंधाना। सास ससुर की सेवा से बढ़कर कोई दूसरा धर्म नहीं है। मेरी आज्ञा का पालन शास्त्र सम्मत है और पालन ना करने से संकटों का सामना करना पड़ सकता है।'

सीता के स्थान पर और कोई स्त्री होती तो वह पति के ऐसे सर्वहितकारी वचनों के सामने निरुत्तर हो जाती। परंतु सीता जी जैसी स्त्री कैसे ना उत्तर देती। अपने पति के हितकारी वचन सुन पहले तो सीता जी की आंखें सजल हो गई और उनसे कुछ कहते ना बना। उन्होंने आंखों में आंसुओं को बलात् रोका और धैर्य धारण करते हुए अपनी सास के चरण स्पर्श कर कहना आरंभ किया :

'प्राणनाथ, आपने जो मुझे समझाने का प्रयास किया है वह मेरी भलाई के लिए है परंतु मैंने सोच कर देखा है पति के वियोग के समान संसार में कोई दूसरा दुख है ही नहीं। मेरे लिए आपके बिना स्वर्ग भी नरक के समान है। आपने संबंधों की बात कही है, जानती हूं, सभी संबंध महत्वपूर्ण है परंतु पति के बिना पत्नी ऐसी है जैसे प्राण के बिना देह या जल के बिना नदी होती है।'

राम सीता जी का उत्तर सुन निरुत्तर हो गए । अब वे वन में आने वाली कठिनाइयों और चुनौतियों का उल्लेख कर सीता जी को मनाने लगे :–

'सीते, तुम साथ जाने का हठ कर रही हो। तुम्हें पता नहीं वन जीवन कठिनाइयों से भरा है। वहां नंगे पैर चलने से कांटे और कंकड़ चुभे गे। रास्ते में भयानक जंगली जानवर होंगे। दुर्गम पर्वत और गहरे नदी नाले होंगे। वहां कठोर भूमि पर सोना पड़ेगा। कंद – मूल फल आदि ही खाने होंगे। यही नहीं, वहां चारों और नरभक्षी राक्षस घूमते रहते हैं जिनसे हमेशा प्राण पर संकट बना रहता है। तुम तो महलों में पली बढ़ी हो, तुम सुकुमारी इस प्रकार की कठिनाइयों को नहीं झेल पाओगी।'

राम जी द्वारा जंगल की कठिनाइयों और भयावहता का वर्णन करने पर भी जगत जननी जानकी अडिग रही और यथासंभव संयत शब्दों में कह उठी :

'हे प्राणनाथ! वन में रहने वाले उदार हृदय के वनदेवी और वनदेवता मेरी सार– संभार करेंगे। मुझे सास सुसर–का स्नेह और प्यार देंगे। कंद – मूल फल का आहार तो वैसे भी स्वास्थ्य के लिए बहुत उत्तम होता है और पर्णकुटी स्वर्ग के समान सुखकारी होगी। धरती पर कुश और पत्तों का बिछौना पति के साथ कामदेव के मनोहर तशक के समान होगा। जंगल की भयावहता का जो आपने वर्णन किया है वह आप के साथ रहने पर कोई मेरे और आंख उठाकर देखने का साहस भी भला कैसे कर पाएगा? आपने कहा है मैं महलों में पली–बढ़ी हूं तो आप भी महलों में पले बढ़े हो। आप

जंगल में रहने के कैसे योग्य हो गये। अगर आप जंगल में रह सकते हैं तो मैं भी रह सकती हूं और आपके साथ मैं भी आप ही की तरह वन में निवास के लिए सक्षम हूं। मैं एक बात जानती हूं अगर आप के बिना मुझे अयोध्या में रहना पड़ा तो इस देह में प्राण नहीं रह पाएंगे।'

राम जी सीता के इस प्रकार के निश्चयात्मक वचनों के समक्ष निरुत्तर हो गए और वह जान गए कि अगर अयोध्या में सीता को छोड़ा तो वह जीवित नहीं बचेगी। मैं सुकुमारी नाथ बन जोगु। इन पंक्तियों से फैसला हो गया कि सीता जी को साथ ले जाना ही होगा क्योंकि राम जी समझ गए कि अगर उन्हें अयोध्या में छोड़ा गया तो वह जीवित नहीं बचेगी : 'देखी दसा रघुपति जिए जाना, हठ राखिहिं नहीं राखिहिं प्राणा।'

प्रतिष्ठित साहित्यकार अमीश ने 'सीता मिथिला की योद्धा' पुस्तक में सीता को बचपन से ही असाधारण लड़की बताया है और उसे गुरुकुल में ना केवल शास्त्र का अध्ययन कराया गया बल्कि उसे शस्त्र का भी प्रशिक्षण दिया गया। शस्त्र संचालन में वह बहुत निपुण थी। रामचरितमानस में तुलसीदास ने सीता को भारतीय नारी का चरमोत्कृष्ठ निर्देशन किया है। वह सर्वाधिक विनयशीलता, लज्जाशीला, संयमशीला, सहिष्णुता और पातिव्रत से देदीप्यमान है। समूचा राम काव्य उसके तप, त्याग और बलिदान के गुणों से अनुप्राणित है। सबसे अधिक हमें उन के निर्णय लेने की क्षमता अभिभूत करती है। वनगमन के समय वन जाने के समर्थन में दिये गये सीता जी के तर्क विश्वसनीय और उनके सक्षम और सशक्त चरित्र को उजागर करते हैं।

योगात्परतरं पुण्यं योगात्परतरं सुखम् ।
योगात्परतरं सूक्ष्मं योगमार्गात्परं न हि ।।

योगबीज में गोरखनाथ जी का कथन है कि योग से बढ़कर न तो कोई पुण्य है, न कोई सुख और न सूक्ष्म ज्ञान ही है।

योग जीवन का विज्ञान है, हठयोग अमृत विद्या है। हठयोग तन को स्वस्थ, मन को स्थिर और आत्मा को परमपद में प्रतिष्ठित करने अथवा अमृततत्व को प्राप्त करने का आमोद साधन तथा महाज्ञान है। हठयोग मानवीय जीवन को सहज और नैसर्गिक प्राकृतिक वातावरण के अनुकूल संयोजित करने का शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक प्रयोग है। योग से बढ़कर अन्य मोक्षप्रद मार्ग नहीं है।

–योगी शिवनंदन नाथ

रघुवीर पग द्वार पे

सुमति श्रीवास्तव
कचहरी
जिला जौनपुर

रघुवीर पग द्वार पे पड़ते, खिली कलियां यहां।
जग झूमता पथ दीप से सजता, करें झिलमिल जहां।।
खुशियां लिए नर, नेह ज्योति तले जरा इतरा रहे।
वनवास से भगवान राम, पुरी अभी बस आ रहे।।

दशकंध का वध जीत सिंहल देश दे रहते यहां।
रघुवीर पग द्वार पे पड़ते खिली कलियां यहां।।

खग झूमते खिलती कली चहुंओर है खुशियां बड़ी।
सुत देख आंख भरी लगे, जीत सी बस ये घड़ी।।
घर त्याग के वन को गए जब, मात रो कर के रही।
पथ देखती चुपचाप सी कहती नहीं दिल की कहीं।।

दिन बीतते कब साल बने, अब लौटती खुशियां यहां।।
रघुवीर पग द्वार पे पड़ते खिली कलियां यहां।।

करते सभी गुणगान हैं, नभ से गिरे बहु फूल है।
सुर गीत मंगल गा रहे, सब खत्म प्रस्तर शूल है।।
बहुरंग ले धरती सजी कमला विनायक पूजते।
हर दीप की खिलती विभा सह देव आकर घूमते।।

पल दिव्य रोशन और सुंदर विश्व में दिखता कहां।
रघुवीर पग द्वार पे पड़ते खिली कलियां यहां।।

27 नवंबर पर विशेष

कालभैरवाष्टमी

पंडित कैलाशनारायण
ज्योतिषाचार्य
उज्जैन, मध्य प्रदेश

भैरव (शाब्दिक अर्थ– भयानक) हिन्दुओं के एक देवता हैं जो शिव के रूप हैं। इनकी पूजा भारत और नेपाल में होती है। हिन्दू और जैन दोनों भैरव की पूजा करते हैं। भैरवों की संख्या ६४ है। ये ६४ भैरव भी ८ भागों में विभक्त हैं।

कोलतार से भी गहरा काला रंग, विशाल प्रलंब, स्थूल शरीर, अंगारकाय त्रिनेत्र, काले डरावने चोगेनुमा वस्त्र, रूद्राक्ष की कण्ठमाला, हाथों में लोहे का भयानक दण्ड और काले कुत्ते की सवारी – यह है महाभैरव, अर्थात् मृत्यु–भय के भारतीय देवता का बाहरी स्वरूप।

उपासना की दृष्टि से भैरव तमस देवता हैं। उनको बलि दी जाती है और जहाँ कहीं यह प्रथा समाप्त हो गयी है वहाँ भी एक साथ बड़ी संख्या में नारियल फोड़ कर इस कृत्य को एक प्रतीक के रूप में सम्पन्न किया जाता है। यह एक ऐतिहासिक सत्य है कि भैरव उग्र कापालिक सम्प्रदाय के देवता हैं और तंत्रशास्त्र में उनकी आराधना को ही प्राधान्य प्राप्त है। तंत्र साधक का मुख्य लक्ष्य भैरव भाव से अपने को आत्मसात करना होता है। हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में एक राग का नाम इन्हीं के नाम पर भैरव रखा गया है। कालभैरव की पूजाप्रायः पूरे देश में होती है और अलग–अलग अंचलों में अलग–अलग नामों से वह जाने–पहचाने जाते हैं। महाराष्ट्र में खण्डोबा उन्हीं का एक रूप है और खण्डोबा की पूजा–अर्चना वहाँ ग्राम–ग्राम में की जाती है। दक्षिण भारत में भैरव का नाम शास्ता है। वैसे हर जगह एक भयदायी और उग्र देवता के रूप में ही उनको मान्यता मिली हुई है और उनकी अनेक प्रकार की मनौतियां भी स्थान–स्थान पर प्रचलित हैं। भूत, प्रेत, पिशाच, पूतना, कोटरा और रेवती आदि की गणना भगवान शिव के अन्यतम गणों में की जाती है। दूसरे शब्दों में कहें तो विविध रोगों और आपत्तियों विपत्तियों के वह अधिदेवता हैं। शिव प्रलय के देवता भी हैं, अतः विपत्ति, रोग एवं मृत्यु के समस्त दूत और देवता उनके अपने सैनिक हैं। इन सब गणों के अधिपति या सेनानायक हैं महाभैरव। सीधी भाषा में कहें तो भय वह सेनापति है जो बीमारी, विपत्ति और विनाश के पार्श्व में उनके संचालक के रूप में सर्वत्र ही उपस्थित दिखायी देता है। 'शिवपुराण' के अनुसार कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की अष्टमी को मध्यान्ह में भगवान शंकर के अंश से

भैरव की उत्पत्ति हुई थी, अतः इस तिथि को **काल-भैरवाष्टमी** के नाम से भी जाना जाता है। पौराणिक आख्यानों के अनुसार अंधकासुर नामक दैत्य अपने कृत्यों से अनीति व अत्याचार की सीमाएं पार कर रहा था, यहाँ तक कि एक बार घमंड में चूर होकर वह भगवान शिव तक के ऊपर आक्रमण करने का दुस्साहस कर बैठा। तब उसके संहार के लिए शिव के रुधिर से भैरव की उत्पत्ति हुई। कुछ पुराणों के अनुसार शिव के अपमान-स्वरूप भैरव की उत्पत्ति हुई थी। यह सृष्टि के प्रारंभकाल की बात है। सृष्टिकर्ता ब्रह्मा ने भगवान शंकर की वेशभूषा और उनके गणों की रूपसज्जा देख कर शिव को तिरस्कारयुक्त वचन कहे। अपने इस अपमान पर स्वयं शिव ने तो कोई ध्यान नहीं दिया, किन्तु उनके शरीर से उसी समय क्रोध से कम्पायमान और विशाल दण्डधारी एक प्रचण्डकाय काया प्रकट हुई और वह ब्रह्मा का संहार करने के लिये आगे बढ़ आयी। स्रष्टा तो यह देख कर भय से चीख पड़े। शंकर द्वारा मध्यस्थता करने पर ही वह काया शांत हो सकी। ऐसा भी कहा जाता है की, ब्रह्मा जी के पांच मुख हुआ करते थे तथा ब्रह्मा जी पांचवे वेद की भी रचना करने जा रहे थे,सभी देवो के कहने पर महाकाल भगवान शिव ने जब ब्रह्मा जी से वार्तालाप की परन्तु ना समझने पर महाकाल से उग्र, प्रचंड रूप भैरव प्रकट हुए और उन्होंने नाखून के प्रहार से ब्रह्मा जी की का पांचवा मुख काट दिया, इस पर भैरव को ब्रह्मा हत्या का पाप भी लगा। कालान्तर में भैरव-उपासना की दो शाखाएं- बटुक भैरव तथा काल भैरव के रूप में प्रसिद्ध हुई। जहां बटुक भैरव अपने भक्तों को अभय देने वाले सौम्य स्वरूप में विख्यात हैं वहीं काल भैरव आपराधिक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण करने वाले प्रचण्ड दंडनायक के रूप में प्रसिद्ध हुए। तंत्रशास्त्र में अष्ट-भैरव का उल्लेख है :

असितांग-भैरव, रुद्र-भैरव, चंद्र-भैरव, क्रोध-भैरव, उन्मत्त-भैरव, कपाली-भैरव, भीषण-भैरव तथा संहार-भैरव।

कालिका पुराण में भैरव को नंदी, भृंगी, महाकाल, वेताल की तरह भैरव को शिवजी का एक गण बताया गया है जिसका वाहन कुत्ता है। ब्रह्मवैवर्तपुराण में भी, **महाभैरव, संहार भैरव, असितांग भैरव, रुद्र भैरव, कालभैरव, क्रोध भैरव ताम्रचूड़ भैरव तथा चंद्रचूड़ भैरव** नामक आठ पूज्य भैरवों का निर्देश है।

इनकी पूजा करके मध्य में नवशक्तियों की पूजा करने का विधान बताया गया है। शिवमहापुराण में भैरव को परमात्मा शंकर का ही पूर्णरूप बताते हुए लिखा गया है –

भैरवः पूर्णरूपोहि शंकरस्य परात्मनः।
मूढास्तेवै न जानन्ति मोहिताः शिवमायया।।

ध्यान के बिना साधक मूक सदृश है, भैरव साधना में भी ध्यान की अपनी विशिष्ट महत्ता है। किसी भी देवता के ध्यान में केवल निर्विकल्प-भाव की उपासना को ही ध्यान नहीं कहा जा सकता। ध्यान का अर्थ है – उस देवी-देवता का संपूर्ण आकार एक क्षण में मानस-पटल पर प्रतिबिम्बित होना। श्री बटुक भैरव जी के ध्यान हेतु इनके सात्विक, राजस व तामस रूपों का वर्णन अनेक शास्त्रों में मिलता है।

जहां सात्विक ध्यान – अपमृत्यु का निवारक, आयु-आरोग्य व मोक्षफल की प्राप्ति कराता है, वहीं धर्म, अर्थ व काम की सिद्धि के लिए राजस ध्यान की उपादेयता है, इसी प्रकार कृत्या, भूत, ग्रहादि के द्वारा शत्रु का शमन करने वाला तामस ध्यान कहा गया है। ग्रंथों में लिखा है कि गृहस्थ को सदा भैरवजी के सात्विक ध्यान को ही प्राथमिकता देनी चाहिए। भारत में भैरव के प्रसिद्ध मंदिर हैं जिनमें काशी का काल भैरव मंदिर सर्वप्रमुख माना जाता है। काशी विश्वनाथ मंदिर से भैरव मंदिर कोई डेढ़-दो किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। दूसरा नई दिल्ली के विनय मार्ग पर नेहरू पार्क में बटुक भैरव का पांडवकालीन मंदिर अत्यंत प्रसिद्ध है। तीसरा उज्जैन के काल भैरव की प्रसिद्धि का कारण भी ऐतिहासिक और तांत्रिक है। नैनीताल के समीप घोड़ाखाल का बटुकभैरव मंदिर भी अत्यंत प्रसिद्ध है। यहाँ गोलू देवता के नाम से भैरव की प्रसिद्धि है।

इसके अलावा शक्तिपीठों और उपपीठों के पास स्थित भैरव मंदिरों का महत्व माना गया है। जयगढ़ के प्रसिद्ध किले में काल-भैरव का बड़ा प्राचीन मंदिर है जिसमें भूतपूर्व महाराजा जयपुर के ट्रस्ट की और से दैनिक पूजा-अर्चना के लिए पारंपरिक-पुजारी नियुक्त हैं। मध्य प्रदेश के सिवनी जिले के ग्राम अदेगाव में भी श्री काल भैरव का मंदिर है जो किले के अंदर है जिसे गढ़ी ऊपर के नाम से जाना जाता है। कहते हैं औरंगजेब के शासन काल में जब काशी के भारत-विख्यात विश्वनाथ मंदिर का ध्वंस किया गया, तब भी कालभैरव का मंदिर पूरी तरह अछूता बना रहा था। जनश्रुतियों के अनुसार कालभैरव का मंदिर तोड़ने के लिये जब औरंगजेब के सैनिक वहाँ पहुँचे तो अचानक पागल कुत्तों का एक पूरा समूह कहीं से निकल पड़ा था। उन कुत्तों ने जिन सैनिकों को काटा वे तुरंत पागल हो गये और फिर स्वयं अपने ही साथियों को उन्होंने काटना शुरू कर दिया। बादशाह को भी अपनी जान बचा कर भागने के लिये विवश हो जाना पड़ा। उसने अपने अंगरक्षकों द्वारा अपने ही सैनिक सिर्फ इसलिये मरवा दिये कि पागल होते सैनिकों का सिलसिला कहीं खुद उसके पास तक न पहुँच जाए। भारतीय संस्कृति प्रारंभ से ही प्रतीकवादी रही है और यहाँ की परम्परा में प्रत्येक पदार्थ तथा भाव के प्रतीक उपलब्ध हैं। यह प्रतीक उभयात्मक हैं – अर्थात स्थूल भी हैं और सूक्ष्म भी। सूक्ष्म भावनात्मक प्रतीक को ही कहा जाता है –देवता। चूँकि भय भी एक भाव है, अतः उसका भी प्रतीक है – उसका भी एक देवता है और उसी भय का हमारा देवता हैं- महाभैरव। मध्यप्रदेश के उज्जैन में भी कालभैरव के ऐतिहासिक मंदिर है, जो बहुत महत्व का है। पुरानी धार्मिक मान्यता के अनुसार भगवान कालभैरव को यह वरदान है कि भगवान शिव की पूजा से पहले उनकी पूजा होगी। इसलिए उज्जैन दर्शन के समय कालभैरव के मंदिर जाना अनिवार्य है। तभी महाकाल की पूजा का लाभ आपको मिल पाता है।

अनेक नगर, पुर तथा पुरियों का अवलोकन करते हुए हनुमान तथा नारद उज्जयिनी (उज्जैन) की शिप्रा नदी के तट पर बसी अवंतिकापुरी, जिसे उज्जयिनी या उज्जैन भी कहते हैं पहुँचे। यहां महाकालेश्वर नाम का ज्योतिर्लिंग है। वहां पहुंचकर दोनों ने सर्वप्रथम शिप्रा माता को प्रणाम किया और फिर स्नान करने के बाद

पुरी में प्रवेश किया। सबसे पहले उन्हें श्रीकालभैरव जी का मंदिर मिला। अवंतिका के श्री कालभैरव मंदिर में जब महावीर हनुमान तथा देवर्षि नारद जी ने प्रवेश किया, तब वहां आरती हो रही थी। भक्त नाना प्रकार के वाद्य बजा रहे थे। कुछ भावुक जन ताली बजाते हुए उमंग में झूम रहे थे। प्रधान पुजारी जी 33 दीपों की आरती घुमा रहे थे। 11–11 दीपों की तीन प्रज्वलित पंक्तियां अत्यंत सुहानी लग रही थीं। आरती हो जाने पर पुजारी जी ने नीराजन का जल छिड़का। सब ने भक्तिपूर्वक अपने मस्तक झुकाकर उस जल को अपने तन पर पड़ने दिया और अपने को कृतार्थ माना। फिर सबने करबद्ध रूप में भगवान की स्तुति आरंभ की। श्रीकालभैरव जी की पूजन–आरती देखकर हनुमान जी और नारद जी अत्यंत आनंदित हुए। उन्होंने कुछ देर वहां रुकने का निश्चय किया और मंदिर के कोने में, जहां किसी को कोई अड़चन न हो, दोनों आसन लगाकर ध्यान–मुद्रा में बैठ गए। ध्यान का तो बहाना था, वास्तव में वे यह देखना चाहते थे कि यहां और क्या–क्या होता है।

उन्होंने देखा कि मंदिर में अगणित श्रद्धालु भक्त आकर श्रीकालभैरव को मद्यपान कराते हैं। इस नैवेद्य–समर्पण की विधि में बड़ी विचित्रता थी। प्रत्येक भक्त अपने मद्यपात्र का दो तिहाई भाग भगवान के मद्यपात्र (कपालपात्र) में डालता था, जिसका दो तिहाई भाग कुछ ही क्षणों में भगवान ग्रहण कर लेते थे। कपालपात्र में बचा शेष मद्य पुजारी जी लाने वाले के मद्यपात्र में वापस डाल देते थे। यह क्रम निरंतर चलता रहता था। श्री कालभैरव को अनवरत मद्यपान करते देखकर हनुमान और नारद चकित हो गए। नारद ने प्रश्न किया, हे महावीर निरंतर मद्य का सेवन करने वाले ये देवता क्या और कुछ नहीं खाते–पीते?'' हनुमान जी ने उत्तर दिया, ''इन्हें महाकाल का एक रूप समझो, यह महाकाल भैरव भी कहे जाते हैं। इन पर श्मशान भैरवी या छिन्नमस्ता भैरवी अदृश्य रूप से सदैव सवार रहती हैं। उन्हीं भैरवी की शक्ति से यह विग्रह अपना कार्य करता रहता है। महाकाल या मृत्यु के रूप में प्रसिद्ध यह कालभैरव देवता मद्य के अतिरिक्त मरने वाले प्रत्येक प्राणी के रक्त आदि सप्तधातु का पान भी करते रहते हैं।'' रवि और मंगलवार तथा अष्टमी एवं चतुर्दशी तिथि को कालभैरव की यात्रा करने से समस्त पापों से छुट जाता है। कालभैरव के दर्शन करने से जो कुछ भी अशुभ कर्म मानव बुद्धि से किया गया हो, वह अब भस्म हो जाता है। कालभैरव के दर्शन करने से लोगो के अनेक जन्म का संचित पाप अतिशीघ्र ही विलीन हो जाता है।

काशी के कोतवाल काल भैरव काशी में यूं तो काल भैरव के कई मंदिर हैं लेकिन सबसे प्रमुख मंदिरों में काल भैरव, बटुक भैरव, आनन्द भैरव मंदिर शामिल हैं। एक कथा के मुताबिक काल भैरव के हाथ ब्रह्म हत्या हो गई। इस पाप से मुक्ति के लिए वह अपने स्वामी भगवान भोलेनाथ से प्रार्थना करने पहुंचे तो भोलेनाथ ने उन्हें काशी में रहकर तपस्या करने और काशी की रखवाली करने का आदेश दिया। इसके बाद से काल भैरव काशी के कोतवाल कहलाए। कहा जाता है कि काशी में प्रवेश के लिए यमराज को भी काल भैरव से इजाजत लेनी पड़ती है।

जय श्री महाकाल! ॐ अलख निरंजन को आदेश! जय श्री भैरवनाथ!

यदि ईश्वर में आस्था है?
तो कष्ट से मुक्ति का रास्ता है!

स्वः पूजयन्ति देवास्तं मृत्यलोके च मानवः।
पाताले नागलोकाश्च श्रीगोरक्ष नमोऽस्तुते ।।

कन्या के विवाह में रुकावट
एवं निःसंतान दंपति
निराश न हों ।

जन कल्याण हेतु निःशुल्क सेवा

सप्ताह में केवल दो दिन **मंगलवार एवं शनिवार**
आने से पहले फोन पर समय लेना अनिवार्य है।

संपर्कः **योगी शिवनंदन नाथ**
Ph. : 0731-4918681, M. : 7415410516
हवा बंगला रोड़, इंदौर, मध्य प्रदेश

कार्तिक पूर्णिमा का विलक्षण गौरव

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

कार्तिक माह की पूर्णिमा –'त्रिपुरी पूर्णिमा' भी कहलाती है। इस दिन यदि कृतिका नक्षत्र हो तो 'महाकार्तिकी' होती है, भरणी नक्षत्र होने से विशेष फल देती है और रोहिणी नक्षत्र होने पर इसका महत्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। इसी दिन सायंकाल में भगवान का मत्स्यावतार हुआ था। इस दिन हुए दानादि का दस यज्ञों के समान फल होता है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव, अंगिरा और आदित्य ने इसे महापुनीत पर्व सिद्ध किया है इसलिए इसमें किए गए गंगा–स्नान, दीप दान, होम, यज्ञ, आराधना आदि का विशेष महत्व है और इन सभी सत्कर्मों का अनन्त फल होता है। इस दिन कृतिका पर चन्द्रमा और बृहस्पति हों तो वह 'महापूर्णिमा होती है, कृतिका पर चन्द्रमा और विशाखा हो तो 'पद्यक' योग होता है जो पुष्कर में भी दुर्लभ है। इस दिन संध्याकाल में त्रिपुरीत्सव करके दीप दान करने से पुर्नजन्मादि कष्ट नहीं होता है। इस तिथि में क्रतिका में विश्व स्वामी का दर्शन करने से ब्राह्मण सात जन्म तक वेदपाठी और धनवान होता है।

इस दिन चन्द्रोदय के समय शिवा, संभूति, सन्तति, प्रीति, अनुसूया और क्षमा–इन छः कृतिकाओं का अर्चन करना चाहिए। कार्तिकी पूर्णिमा की रात्रि में व्रत करके वृषदान करने से शिव –पद प्राप्त होता है। गाय, हाथी, घोड़ा, रथ, घी आदि का दान करने से सम्पत्ति बढ़ती है। इस दिन उपवास करके भगवान–उपासना करने से अग्निष्टोम के समान फल होता है। उसको सूर्यलोक की प्राप्ति होती है। मेष दान करने से ग्रहयोग के कष्ट नष्ट होते हैं। कार्तिकी को अपनी या परायी अलंकृता कन्या का दान करने से 'संतान–व्रत' पूर्ण होता है। कार्तिकी पूर्णिमा से प्रारंभ करके प्रत्येक पूर्णिमा को रात्रि में व्रत और जागरण करने से मनोरथ सिद्ध होते हैं। कार्तिकी की कथा इस प्रकार है–

एक बार त्रिपुर राक्षस ने एक लाख वर्ष तक प्रयागराज में घोर तप किया, जिससे संसार के सभी जड़–चेतन, जीव और देवता भयभीत हो गए। तब देवताओं ने उसका तप भंग करने के लिए अप्सराओं को भेजा किंतु उसके सामने कोई चाल न चली। तब स्वयं ब्रह्माजी उसके पास गए और उससे वर मांगने को कहा। उसने मनुष्य और देवता द्वारा न मारे जाने का वरदान मांगा। इस वरदान के बल से त्रिपुर निडर होकर अत्याचार करने लगा। देवताओं पर षडयंत्र से उसने कैलाश पर भी चढ़ाई कर दी जिसके कारण भगवान शिव और त्रिपुर में घोर संग्राम हुआ। अंत में शिवजी ने ब्रह्मा और विष्णु की सहायता से उसका वध कर दिया। तब से इस दिन का महत्व बहुत बढ़ गया। इस दिन क्षीरसागर दान का विशेष 24 अंगुल के बर्तन भरकर उसमें सोने या चांदी की मछली छोड़कर किया जाता है।

कार्तिक मास में दीपदान

–अध्यात्म संदेश डेस्क

दीपदान अर्थात दीये जलाना : कार्तिक मास में दीपदान निश्चित ही भगवान् विष्णु की प्रसन्नता बढ़ाने वाला है। कार्तिक मास आने पर जो लोग प्रातः स्नान करके आकाश दीपदान करते हैं, वे लोक सब लोकों के स्वामी होकर और सब संपत्तियों से संपन्न होकर इस लोक में सुख भोगते हैं और अंत में मोक्ष को प्राप्त होते हैं ।

घृतेन दीपको यस्य तिलतैलेन वा पुनः। ज्वलते यस्य सेनानीरश्वमेधेन तस्य किम्।।

कार्तिक में घी अथवा तिल के तेल से जिसका दीपक जलता रहता है, उसे अश्वमेध यज्ञ से क्या लेना है ।

सूर्यग्रहे कुरुक्षेत्रे नर्मदायां शशिग्रहे। तुलादानस्य यत्पुण्यं तदत्र दीपदानतः।।

कुरुक्षेत्र में सूर्यग्रहण के समय और नर्मदा में चन्द्रग्रहण के समय अपने वजन के बराबर स्वर्ण के तुलादान करने का जो पुण्य है वह केवल दीपदान से मिल जाता है। जो कोमल तुलसी दल से भगवान विष्णु की पूजा करके रात में उनके लिए आकाशदीप का दान करते हैं वे परम भाग्यशाली होते हैं। आकाश दीप दान देते समय इस मंत्र का उच्चारण करें !

दामोदराय विश्वाय विश्वरूपधराय च। नमस्त्वा प्रदास्यामि व्योम्दीपम हरिप्रियम।।

अर्थात– मैं सर्वस्वरूप भगवान् दामोदर को नमस्कार करके यह आकाशदीप देता हूँ, जो भगवान् को परमप्रिय हैं ।कार्तिक मास में दुर्लभ मनुष्य जन्म को पाकर भगवान विष्णु को प्रिय लगने वाले आकाशदीप का दान देना चाहिए। जो संसार में भगवन विष्णु की प्रसन्नता के लिए आकाशदीप देते हैं वे कभी अत्यंत क्रूर यमराज के दर्शन नहीं करते। एकादशी से, तुलाराशि के सूर्य से अथवा आश्विन पूर्णिमा से लक्ष्मी सहित विष्णु की प्रसन्नता के लिए आकाशदीप प्रारंभ करना चाहिए ।

कार्तिक में दीपदान का एक मुख्य उद्देश्य पितरों का मार्ग प्रशस्त करना भी है। मनुष्य के पितर अन्य पितृगणों के साथ सदा इस बात की अभिलाषा करते हैं कि क्या हमारे कुल में भी कोई ऐसा उत्तम पितृभक्त पुत्र उत्पन्न होगा, जो कार्तिक में दीपदान करके श्रीकेशव को संतुष्ट कर सके। पितरों की प्रसन्नता के लिये दीपदानः

नमः पितृभ्यः प्रेतेभ्यो नमो धर्माय विष्णवे ।
नमो यमाय रुद्राय कान्तारपतये नमः ।।

अर्थात– पितरों को नमस्कार है, प्रेतों को नमस्कार है, धर्म स्वरुप विष्णु को नमस्कार है, यमराज को नमस्कार है तथा दुर्गम पथ में रक्षा करने वाले भगवान् रूद्र को नमस्कार है। इस मंत्र से जो मनुष्य पितरों के लिए आकाश में दीपदान करते हैं उनके वे पित्र नरक में हो तो भी उत्तम गति को प्राप्त होते हैं ।

जो देवालय में, नदी के किनारे, सड़क पर तथा नींद लेने के स्थान पर दीपदान करता है उसे सर्वोत्मुखी लक्ष्मी प्राप्त होती है ।जो मंदिर में दीप जलाता है वह विष्णुलोक को जाता है। जो कीट और काँटों भरी हुई दुर्गम एवं ऊँची नीची भूमि पर दीपदान करता है वह कभी नरक में नहीं पड़ता। महादेव की प्रसन्नता के लिए कुसुंभ का तेल या घी का दीपक प्रतिदिन प्रदोष काल में शिव मंदिर में शिवलिंग के समक्ष जलाएँ।

ध्यान रखें : जहाँ भी दीपक जलाएँ, उससे पहले भूमि पर कुछ अक्षत (अखंडित चावल) रख दें, उसके उपर दीपक रखें। आकाशदेवता के लिए दीपक (आकाश को दिखाकर खुली जगह पर रखें) – विशेषकर शाम को अर्थात प्रदोष काल में या दोनों समय !

नारायण के लिए – सुबह और शाम
शिव मंदिर में – शाम को प्रदोषकाल में
तुलसी जी में – सुबह और शाम
पितरों के लिए – शाम को खुली जगह में (छत इत्यादि पर) पश्चिम दिशा में
सोने की जगह – दोनों समय लगा सकते हैं ।
बाकी जगह (मंदिर/नदी/तालाव/देव, वृक्षों/पीपल–वड़–बेलपत्र) इत्यादि के नीचे – शाम को, गौशाला में सुबह या शाम। दीपक की लौ हमेशा पूर्व या उत्तर में रखें ।

कार्तिक स्नान : धार्मिक ग्रंथों में 'कार्तिक स्नान' का बड़ा ही महत्त्व बताया गया है। 'स्कंदपुराण' के अनुसार कार्तिक मास में किया गया स्नान व व्रत भगवान विष्णु की पूजा के समान कहा गया है। कार्तिक स्नान की पुराणों में बड़ी महिमा कही गई है। कार्तिक मास को स्नान, व्रत व तप की दृष्टि से मोक्ष प्रदान करने वाला बताया गया है। 'स्कंदपुराण' के अनुसार कार्तिक मास में किया गया स्नान व व्रत भगवान विष्णु की पूजा के समान कहा गया है। कार्तिक मास में शुक्ल पक्ष की एकादशी को तुलसी विवाह और पूर्णिमा को गंगा स्नान किया जाता है।

पौराणिक उल्लेख : कार्तिक मास को शास्त्रों में पुण्य मास कहा गया है। पुराणों के अनुसार जो फल सामान्य दिनों में एक हजार बार गंगा नदी में स्नान का होता है तथा प्रयाग में कुंभ के दौरान गंगा स्नान का फल होता है, वही फल कार्तिक माह में सूर्योदय से पूर्व किसी भी नदी में स्नान करने मात्र से प्राप्त हो जाता है। शास्त्रों के अनुसार कार्तिक मास स्नान की शुरुआत शरद पूर्णिमा से होती है और इसका समापन कार्तिक पूर्णिमा को होता है।

भगवान विष्णु : एक बार कार्तिक मास की महिमा जानने के लिए कुमार कार्तिकेय ने भगवान शिव से पूछा कि– 'कार्तिक मास को सबसे पुण्यदायी मास क्यों कहा जाता है?' इस पर भगवान शिव ने कहा कि– 'नदियों में जैसे गंगा श्रेष्ठ है, भगवानों में विष्णु, उसी प्रकार मासों में कार्तिक श्रेष्ठ मास है। इस मास में भगवान विष्णु जल के अंदर निवास करते हैं। इसलिए इस महीने में नदियों एवं तलाब में स्नान करने से विष्णु भगवान की पूजा और साक्षात्कार का पुण्य प्राप्त होता है। भगवान विष्णु ने जब कृष्ण रूप में अवतार लिया था, तब रुक्मिणी और सत्यभामा उनकी पटरानी हुई। सत्यभामा पूर्व जन्म में एक ब्राह्मण की पुत्री थी। युवावस्था में ही एक दिन इनके पति और पिता को एक राक्षस ने मार दिया। कुछ दिनों तक ब्राह्मण की पुत्री रोती रही। इसके बाद उसने स्वयं को विष्णु भगवान की भक्ति में समर्पित कर दिया। वह सभी एकादशी का व्रत रखती और कार्तिक मास में नियम पूर्वक सूर्योदय से पूर्व स्नान करके भगवान विष्णु और तुलसी की पूजा करती थी। बुढ़ापा आने पर एक दिन जब ब्राह्मण की पुत्री ने कार्तिक स्नान के लिए गंगा में डुबकी लगायी, तब बुखार से कांपने लगी और गंगा तट पर उसकी मृत्यु हो गयी। उसी समय विष्णु लोक से एक विमान आया और ब्राह्मण की पुत्री का दिव्य शरीर विमान में बैठकर विष्णु लोक पहुँच गया।'

माहात्म्य : कार्तिक के पूरे माह स्नान, दान, दीपदान, तुलसी विवाह, कार्तिक कथा का माहात्म्य आदि सुनना चाहिए। ऐसा करने से शुभ फलों की प्राप्ति होती है व पापों का शमन होता है। पुराणों के अनुसार जो व्यक्ति इस माह में स्नान, दान तथा व्रत करते हैं, उनके पापों का अन्त हो जाता है।

कार्तिक माह अत्यधिक पवित्र माना जाता है। भारत के सभी तीर्थों के समान पुण्य फलों की प्राप्ति इस माह में मिलती है। इस माह में की गई पूजा तथा व्रत से ही तीर्थयात्रा के बराबर शुभ फलों की प्राप्ति हो जाती है। इस माह के महत्व के बारे में **'स्कन्दपुराण', 'नारदपुराण', 'पद्मपुराण'** आदि प्राचीन ग्रंथों में मिलता है। कार्तिक माह में किए स्नान का फल, एक सहस्र बार किए गंगा स्नान के समान, सौ बार माघ स्नान के समान है।

जो फल कुम्भ में प्रयाग में स्नान करने पर मिलता है, वही फल कार्तिक माह में किसी पवित्र नदी के तट पर स्नान करने से मिलता है। इस माह में अधिक से अधिक जप करना चाहिए। भोजन दिन में एक समय ही करना चाहिए। जो व्यक्ति कार्तिक के पवित्र माह के नियमों का पालन करते हैं, वह वर्ष भर के सभी पापों से मुक्ति पाते हैं।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र

क्या आपकी लेखन में अभिरुचि है?
क्या आप भी कभी अपने विचारों, भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कागज– कलम उठाते हैं?
क्या आप लेखक/लेखिका, कवि/कवियत्री है?

आपको **अध्यात्म संदेश** ई पत्रिका की ओर से आमंत्रण है, आप अपनी रचनाएं, कविताएं, गीत, लघु कथाएं हमें प्रेषित करें। आपकी रचनाएं आलेख प्रकाशन योग्य होने पर उसका पत्रिका में अवश्य प्रकाशन किया जाएगा।

अपनी रचनायें हमें प्रेषित करते समय यह अवश्य सुनिश्चित करें कि यह रचना आपकी अपनी मौलिक कृति है और न तो यह किसी पत्र – पत्रिका – पुस्तक – ब्लॉग – वेबसाइट आदि में प्रकाशनार्थ विचाराधीन है और न ही कभी प्रकाशित हुई है।

आपकी रचना को मूल रूप में प्रकाशित/संपादित रूप में प्रकाशित करने अथवा प्रकाशित न करने का पूर्ण विवेकाधिकार संपादक मंडल का है।

आलेख भेजने की अंतिम तिथि 15 नवंबर 2022

विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेंजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह पूर्णतः निः शुल्क है। रचनाएँ ई–मेलः **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ

शोधपत्र

गुरु नानकदेव के काव्य में निर्गुण - सगुण - तत्त्व - समन्वय

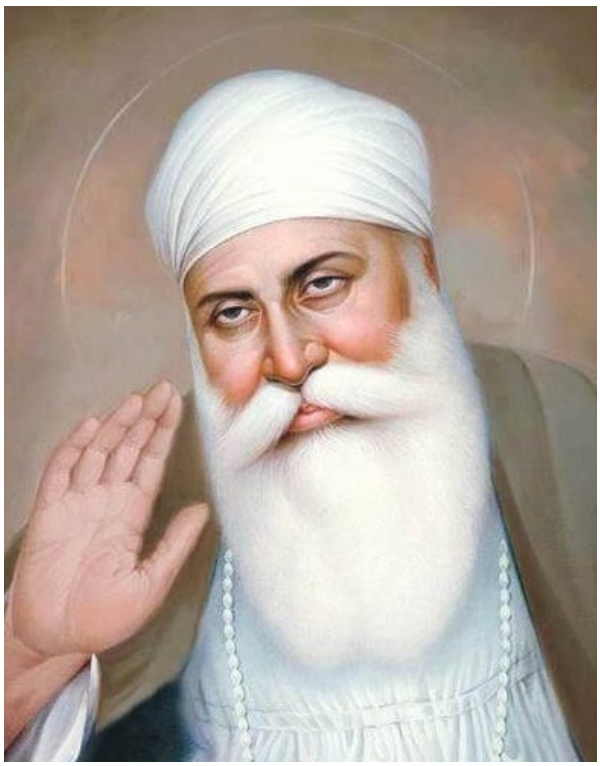

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

मध्ययुग के संत कवियों में गुरु नानकदेव (सं. 1526–1595–96 वि.) का गौरवपूर्ण स्थान है। कबीरदास की भाँति यह भी मौलिक चिंतक थे। उन्होंने परमात्मा का साक्षात्कार किया और प्रत्यक्षानुभूति भी प्राप्त की। उनकी वाणी का संकलन गुरुग्रंथसाहिब के महला१ में प्राप्त होता है। 19 रागों में निबद्ध 2949 छंदों में गुरु नानकदेव ने अध्यात्म और भक्ति की ऐसी रसधारा प्रवाहित की है जिसमें ज्ञानी और भक्त, दार्शनिक और विचारकों के साथ सहृदय पाठकगण पूर्ण रूप से डूब जाते हैं। गुरु नानकदेव ने अपने बीज मंत्र में कहा है –

ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैः अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरु प्रसादि।

उन्होंने परमात्मा के स्वरूप को जिस प्रकार रूपायित किया है, उसी की व्याख्या समस्त वाणी में दिखाई देती है। वह ब्रह्म को निर्गुण मानते हैं। उन्होंने निषेधात्मक शैली का सहारा लेते हुए उसे अनिर्वचनीय कहा है। उसकी केवल अनुभूति ही की जा सकती है। वह ज्योति–स्वरूप है। जहाँ–तहाँ सर्वत्र उसी का प्रकाश है। वह एक है। 'सर्वव्यापी और घट–घटवासी है। उसे उन्होंने 'शून्य' कहा है जिससे संपूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। सृष्टि के मूलारंभ इस परमतत्त्व को उन्होंने 'ओंकार' कहा है और इसी से ब्रह्मादिक एवं सृष्टि की उत्पत्ति मानी है। उसका न कोई नाम है न रूप। वह अलख और अपार है –

अलख अपार अगंम अगोचर ना तिसु कालु न करमा।
जाति अजाति अजोनी संभउ ना तिसु भाउ न भरमा।।

चारों ओर उसका प्रकाश व्याप्त है। परंतु फिर भी उन्हें शुद्ध निर्गुणवादी नहीं कहा जा सकता।

तीसरे गुरु अमरदास जी के साथ नानकपंथ में सगुणवादी तत्त्वों का समावेश हो गया और इस प्रकार नानकपंथ भी निर्गुण और सगुणवादी तत्त्वों के सम्मिलित रूप में विकसित हुआ। समन्वय की परंपरा के सूत्रपात का श्रेय जहाँ गुरु अमरदास को जाता है, वहाँ स्पष्ट रूप से यह चौथे गुरु अर्जुनदास जी की वाणी में ही दिखाई देता है। इसके बाद छठे गुरु हर गोविंद सिंह में सगुणवाद की पराकाष्ठा दिखाई देती है। नानक के उपास्य निर्गुण एवं निराकार

हैं, किंतु अपने साहिब की निर्गुणता में विश्वास रखते हुए भी उसकी सगुणता को उन्होंने न केवल स्वीकार किया है, वरन् निर्गुण और सगुण दोनों को एक ही धरातल पर लाकर प्रतिष्ठित भी कर दिया है। 'सिद्ध-गोष्ठी' में उन्होंने निर्गुण से सगुण की उत्पत्ति दिखलाकर निर्गुण-सगुण में सुंदर समन्वय स्थापित किया –

अविगतो निरमाइलु उपजे निरगुण ते सरगुणु थीआ

गुरु नानकदेव यह स्पष्ट घोषणा करते हैं कि मूलपुरुष ने स्वयं ही अपने आपको निर्मित किया है और निर्गुण और सगुण रूप धारण करता है। वह स्वयं निर्गुण है और सृष्टि के कारण सगुण बनता है, जिसे नाम-रूप की संज्ञा दी जाती है। एक ओर उन्होंने आचार्य शंकर के अद्वैतवाद की झलक **'आपे बीज आपे ही खाहु नानक हुकुमि आवहु जसहु'** में दी तो दूसरी ओर पौराणिक मतवाद की छाया **'जब जब होत अरिष्ट अपारा। तब तब देहधरत करतारा'** इस अवतारवादी धारणा में स्पष्ट की।

नानकदेव ने उपासक की आंतरिक वृत्ति के अनुकूल ब्रह्म के स्वरूप का निरूपण किया है। उनका विचार है कि परमात्मा निर्गुण भी है, सगुण भी और निर्गुण सगुण उभयस्वरूप भी है। वास्तव में परोक्षसत्ता अद्‌भुत है। उसके गुण अनन्त हैं। उसके नाम-धाम भी असंख्य हैं। उसके लोक भी असंख्य हैं।

अमित गुण वाले परमात्मा के गुणों का कथन करने में वे स्वयं को असमर्थ पाते हैं। तिल मात्र ही उसकी महिमा का वर्णन हो पाता है, क्योंकि बुद्धि सीमित है और गुण असीम हैं। वह समस्त सृष्टि का रचयिता एवं शक्तियों का स्वामी है। वह अवगुणी को भी गुणी बना सकता है और गुणवान को और गुणी बना सकता है। प्रभु के बिना अन्य कोई व्यक्ति ऐसा नहीं जो अन्य व्यक्ति में गुणों की उत्पत्ति कर सके –

नानक निरगुणि गुणु करे गुणवंतिआ गुणु दे।
तेहा कोइ न सुझई जि तिसु गुणु कोइ करे।।

सगुण भक्तों की भाँति गुरु नानक ने भी उसे व्यक्तित्व प्रदान कर उसका स्तवन किया है। उसके साथ विविध प्रकार के संबंध स्थापित किए हैं। अपनी भावना के अनुसार कहीं सेवक-सेव्य भाव से कहीं कान्ताभाव से तो कहीं वत्सल्-भाव से अपनी भक्ति को रूपायित किया है। एक सच्चे सेवक के रूप में उनकी रग-रग में सेवा-भाव समाया हुआ है। वह अपने को स्वामी द्वारा खरीदा हुआ गुलाम कहने पर अपना सौभाग्य मानते हैं –

मुल खरीदी लाला गोला मेरा नाउ सभागा।

गुरु नानकदेव मानते हैं वास्तव में ब्रह्म निर्गुण है, किंतु सृष्टि के कारण नाम-रूप धारण करके सगुण हो जाता है। सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और विनाश की क्रिया में प्रवृत्त इस 'सक्रिय ब्रह्म' को नानक ने सगुण ब्रह्म की संज्ञा दी है और उसकी वन्दना गुणाकर, गुणनिधि के रूप में की है जिसके गुणों का अंत कोई नहीं पा सकता –

गुणनिधान तेरा अंतु न पाइआ। साच सबदि तुझ माहि समाइआ।

गुरु नानकदेव ने अनेक स्थानों पर ब्रह्म के विराट स्वरूप के माध्यम द्वारा भी उसका सगुणत्व व्यंजित किया है। परमात्मा आप ही पवन, जल और वैश्वानर है। आप ही चन्द्र और सूर्य हैं। आप ही पुरुष और आप ही नारी है आप ही दिन और आप ही रात है।

जगन्नाथपुरी के पंडितों को सुनाई 'आरती' में परमात्मा के विराट स्वरूप का चित्रण करते हुए प्रभु के सगुण रूप का वर्णन किया है। इसमें प्रभु के सहस्र नेत्रों, सहस्र मूर्तियों, सहस्र चरणों एवं सहस्र घ्राणेन्द्रियों का वर्णन करके उसकी विराटता दर्शायी है जिसकी ज्योति सभी में एक साथ प्रकाशित हो रही है। ऐसे विराट प्रभु की आरती के उपकरण हैं स्वयं सूर्य और चंद्रमा जो दीपक बने हैं। मलय-चंदन ही सुगंधित धूप है। पवन चँवर डुला रहा है और वन के समस्त पुष्प अपने भाव अर्पित कर रहे हैं।

नानकदेव सगुण ब्रह्म के इस विराट स्वरूप को अवर्णनीय मानते हैं –

अंतु न जापै कीता आकारु। अंत न जापै पारावारु।।
अंत कारण केते बिललाहि। ताके अंत न पाए जाहि।।
एहु अंत न जाणै कोइ। बहुता कहीए बहुता होइ।।

ज्ञान, शक्ति, बल, ऐश्वर्य, वीर्य तथा तेज इन षड्‌गुणों से संपन्न होने के कारण ब्रह्म सगुण है। वह अपने गुणों में अगाध है। उसे आंका नहीं जा सकता –

बडे मेरे साहिबा गहिर गंभीरा गुणी गहीरा।
कोई न जाणै तेरा केता केबड्‌ड चीरा।।

कोई उसके बड़प्पन का तिल-मात्र भी कथन नहीं कर सकता

गिआनी धिआनी गुरु गुरहाई। कहणु न जाई तेरी तिलु वडिआई।।

अपने गुणनिधान परमात्मा को नानक ने विभिन्न नामों से संबोधित किया है। वह स्पष्ट कहते हैं कि मैं 'हरि बिना और किसी को नहीं पूजता।' –

दुबिधा न पड़उ हरि बिनु होरु न पूजउ मड़े मसाणि न जाई।।

क्योंकि जो हरिरस का आस्वादन कर लेता है उस भक्त के अन्य रस समाप्त हो जाते हैं। वे भक्त हरिरस पीकर सदैव तृप्त रहते हैं –

हरि रसु जिनी चाखिआ अनरस ठाकि रहाइआ।
हरि रसु पी सदा तृपति भए फिरि तृसना भुख गवाइआ।।

नानक ने अच्युत, परब्रह्म, अविनाशी, पूर्ण, निराकार, अयोनि, स्वयंभू, अकाल-मूर्ति, अव्यक्त, अगोचर आदि निर्गुणी नामों के साथ-साथ हरि, राम, मुरारि, मधुसूदन, माधव, नारायण, प्रभु, नरहरि, बनवारी आदि सगुणवाची नामों का अनेकशः प्रयोग किया है।

नाम गुण की भाँति परमात्मा की लीलाओं और उसके धामों का भी उन्होंने वर्णन किया है। नानक ने निराकार की उपासना की है, परंतु पुराणों में वर्णित परमात्मा के रूप एवं उसकी विविध लीलाओं का कहीं भी बहिष्कार नहीं किया। राम, कृष्ण आदि की विभिन्न लीलाओं का अनेक स्थलों पर उल्लेख किया है। पौराणिक अवतार कथाओं को गुरु नानक जी ने दूसरे संदर्भ में ग्रहण किया है। ब्रह्मा के अभिमान, राजा बलि के दान के अहंकार, हरीशचन्द्र

के यश की चाह, हिरण्यकश्पु को मारकर भक्त प्रह्लाद की रक्षा, रावण, सहस्रबाहु, जरासंध, कालयवन, कालनेमि आदि राक्षसों के संहार और संतों की रक्षा आदि विविध लीलाओं का उल्लेख किया है।

विष्णु के अवतार राम और कृष्ण के जीवन की विविध लीलाओं का भी यथास्थान वर्णन किया है। कृष्ण के गोवर्धन–धारण एवं रामचन्द्र द्वारा समुद्र पर पत्थर तैराने की लीला का चित्रण देखिए –

गुरुमति सनि गोबरधन धारे। गुरमति साइरि पाइण तारे।

किंतु यहाँ ध्यातव्य है कि उपर्युक्त लीलाओं का वर्णन उन्होंने प्रसंगानुसार किया है, अवतारवाद के पोषक के रूप में नहीं।

नानक के अनुसार ईश्वर स्वयं को देखने के लिए अर्थात् लीला के लिए सृष्टि के रूप में अपने आपको प्रकट करता है। यहाँ नानक जी का सिद्धांत सगुण भक्तों के चिंतन के अनुरूप है। वे मानते हैं कि ईश्वर लीला के लिए सृष्टि करता है। इस कार्य के लिए उसकी शक्ति 'माया' उसकी सहायता करती है। परमात्मा की सत्ता दो रूपों में है, एक निर्गुण अवस्था और दूसरी सगुण अवस्था। अपने आप वह निर्गुण रूप है किंतु सृष्टि वेफ संबंध से वह सगुण है। तब वह नाम–रूप में आता है और चाव से अपनी लीला देखता है–

आपीन्हे आपु साजिओ आपीन्हे रचिओ नाउ
दुमी कुदरति साजीए करि आसणु डिठो चाउ

नानक–वाणी में व्यक्त नानक के विचारों के उपर्युक्त अध्ययन–विश्लेषण वेफ उपरांत कहा जा सकता है कि नानक को परमात्मा के दो रूप मान्य हैं—पिण्ड रूप और ब्रह्माण्ड रूप। पिण्ड रूप में वह शरीर में अंतर्यामी बनकर स्थित है और ब्रह्माण्ड रूप में उसके विराट रूप की चर्चा होती है। विराट् रूप का सापेक्ष संबंध सगुण भाव से ही है। वह स्वयंभू स्वयं ही नाम रूपात्मक सृष्टि के रूप में स्वयं को प्रकट कर रहा है। अन्य निर्गुणवादी संतों की भाँति उनकी दृष्टि में ब्रह्म निर्गुण और सगुण उभय रूप है। व्यक्त और अव्यक्त वह दोनों आप ही है।

अतः कहा जा सकता है कि गुरु नानक के 'राम' अथवा 'हरि' निराकार होते हुए भी सगुण हैं। सगुणवाद के तत्त्व उसमें यथास्थान उपलब्ध हैं। उनकी वाणी में भारतीय आध्यात्मवाद की विशेषता के रूप में निर्गुण तथा सगुण दोनों का समन्वय देखा जा सकता है। परमतत्त्व को निर्गुण कहने से उनका तात्पर्य 'निष्क्रिय' सत्ता से नहीं वरन् प्राकृत गुणों के निषेध से है। उनका परमतत्त्व विविध अलौकिक गुणों से संपन्न है।

संदर्भ
1. सिक्खों का मूलमंत्र, नानक–वाणी, जयराम मिश्र, 'जपुजी' के आरंभ में प्रयुक्त, पृ. 79
2. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, सोरठि, दुतुके, 6, पृ. 392
3. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग रामकली, 1, सिद्ध गोसटि पउड़ी 24, पृ. 541
4. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, जपुजी, पउड़ी, 7, पृ. 82
5. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग मारू, चउपदे 6, पृ. 578
6. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग प्रभाती विभास, असटपदीआ 2, पृ. 792
7. नानकवाणी, जयराम मिश्र, राग मारु, महला 1, सोलहे 1, पृ. 606
8. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, रागु घनासरी, महला 1, सबद 9, पृ. 416
9. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, जपुजी, पउड़ी 24, पृ. 90
10. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग आसा, चउपदे, घरु 2, पृ. 246
11. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग आसा, घरु 2, पृ. 247
12. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, सोरठि, असटपदीआ चउतुकी 1, पृ. 398
13. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग मारू, वार, महला 1, पउड़ी 1, पृ. 667
14. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग गउड़ी, असटपदीआ, 9, पृ. 227
15. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, राग मारू, सोलहे 20, पृ. 659
16. नानक–वाणी, जयराम मिश्र, रागु आसा, महला 1, वार सलोका, पउड़ी 1, पृ. 324

रावण के प्रश्न

कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'
उज्जैन

फाँसी पर चढ़ाने से पूर्व
पूछी जाती है अंतिम इच्छा
फिर क्यों तुम
भूल रहे ये परंपरा ?
हजारों साल मारकर भी मुझे
तुम्हें चौन न मिला ?

मैंने तो चुराई थी
सिर्फ एक बार
सिर्फ एक ही सीता
मैं तो था रावण
सिर्फ और सिर्फ
एक रावण

पर आज
मेरे सामने खड़े हर आदम में
छुपा बैठा है एक रावण
'रावण' ही 'रावण' को
कैसे मार सकता है ?

(अट्टहास के बाद वो दहाड़ा)

पूछता हूँ तुमसे ---
तुमने क्यों रावण जने
राम एक भी क्यों नहीं ?

नदी की धार लिख

व्यग्र पाण्डे
गंगापुर सिटी
(राजस्थान)

आँख मीचते हो और कहते हो दिखता नहीं
परिवर्तन का नर्तन क्या तुम्हें दिखता नहीं
आँख खोलकर देखना अब तो आरंभ कर
रट क्यूँ लगाये हो दिखता नहीं दिखता नहीं।

तू कवि है तू दृष्टा है जगत का
जो दिखता उसे क्यूँ लिखता नहीं
रचनाकार कभी स्वार्थी हो नहीं सकता
फिर परमार्थ पर क्यूँ लिखता नहीं।

माना कि स्वार्थ सबल होता है संसार में
पर प्यार की ताकत भी कम नहीं संसार में
जिस राह पर चल रहे हो आजकल तुम
वो पतन के गर्त में ले जाती है संसार में।

इसलिए खुद को बचा संसार को भी
सहिष्णुता के संग अपने प्यार को भी
बहा बंधुत्व की नदियाँ अपनी लेखनी से
कुल को भी कर पवित्र धार को भी।

लिख पुष्प की खुशबू शाख की नाजुकता
तितलियों का मँडराना भँवरे की आकुलता
लिख मयूर का नर्तन कपोत का प्यार लिख
इठलाती बल खाती नदी की धार लिख।

लिख अचल पहाड़ पर झील की गहराई सी
सदा लिख ऐसा कि लगे स्वयं की परछाई सी
लिख लहर समुद्र की तैरती नावों को लिख
डूबता सूरज को लिख रात के ख्वाबों को लिख ।

लिख मगर ऐसा ना जिससे भाईचारा हो खतम
कविता के सदभाव पर कभी ना करना ये सितम
द्वेष कटुता ईर्ष्या के भाव कभी आये ना मन में
दिखाई ना दे दोष कवि दूर दूर तक तेरे फन में ।

प्यार मधुरता स्नेह के जब होंगे रंग
फिर करेगा न्याय तू कविता के संग
तब उड़ेगी कीर्ति की ध्वजा समझ ले
जायेगी फिर ऊंची गगन तेरी पतंग।

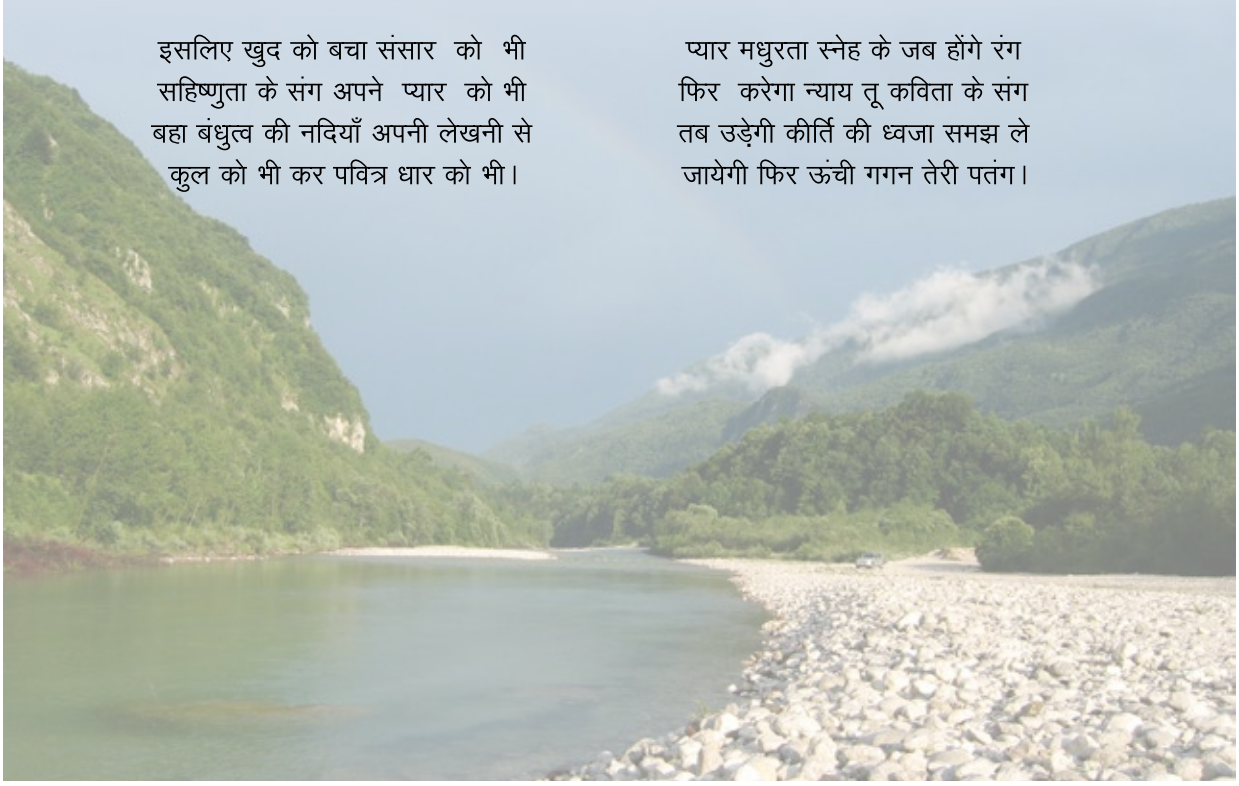

14 नवंबर बाल दिवस पर विशेष

समकालीन परिवेश में बाल साहित्य

बाल सुलभ मनोवृत्तियों के अनुरूप पशु-पक्षियों इत्यादि को पात्र बनाकर इन कहानियों के माध्यम से बच्चों को सत्य, अहिंसा, प्रेम, एकता, परोपकार, ईमानदार, दयालु, साहसी, पराक्रमी, मधुर वचन, धैर्य, विश्व-बंधुत्व, पारस्परिक सद्भाव इत्यादि सामाजिक-नैतिक आदर्शों की तरफ और राष्ट्रभक्त बनने की तरफ उन्मुख किया जाता है।

कृष्ण कुमार यादव
पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी
परिक्षेत्र, वाराणसी, उ.प्र.

बाल विकास में बाल–साहित्य की भूमिका : बच्चे राष्ट्र की आत्मा हैं क्योंकि इन्हीं पर अतीत को सहेज कर रखने की जिम्मेदारी है, इन्हीं में राष्ट्र का वर्तमान रूख करवटें ले रहा है और इन्हीं में भविष्य के अदृश्य बीज बोकर राष्ट्र को पल्लवित और पुष्पित किया जा सकता है। बच्चों के समग्र विकास में बाल साहित्य की सदैव से प्रमुख भूमिका रही है। बाल साहित्य बच्चों से सीधा संवाद स्थापित करने की विधा है। बाल साहित्य की विषय वस्तु बालक भी हो सकता है और वह विस्तृत परिवेश भी जिसके साथ बाल जीवन विकसित होता है। वस्तुतः एक तरफ बाल साहित्य जहाँ मनोरंजन के पल मुहैया कराता है वहीं बाल मनोविज्ञान व बाल मनोभाव के समावेश द्वारा सामाजिक सृजन के दायरे भी खोलता है। बाल साहित्य बच्चों को उनके परिवेश, सामाजिक–सांस्कृतिक परम्पराओं, संस्कारों, जीवन मूल्य, आचार–विचार और व्यवहार के प्रति सतत् चेतन बनाने में अपनी भूमिका निभाता आया है। सोहन लाल द्विवेदी जी ने अपनी कविता **'बड़ों का संग'** में बाल प्रवृत्ति पर लिखा है कि–

खेलोगे तुम अगर फूल से तो सुगंध फैलाओगे,
खेलोगे तुम अगर धूल से तो गन्दे हो जाओगे।
कौवे से यदि साथ करोगे, तो बोलोगे कडुए बोल,
कोयल से यदि साथ करोगे, तो दोगे तुम मिश्री घोल।
जैसा भी रंग रंगना चाहो, घोलो वैसा ही ले रंग
अगर बड़े तुम बनना चाहो, तो फिर रहो बड़ों के संग।

बाल साहित्य का इतिहास बहुत पुराना रहा है। प्राचीन काल में बच्चों के लिए अलग से साहित्य रचना की परम्परा नहीं रही वरन् तमाम ग्रन्थों में ही बालोपयोगी प्रसंग समाहित किये जाते रहे। वेद, पुराण, आरण्यक, रामायण, महाभारत, बौद्ध व जैन ग्रन्थों में कहानियों और जीवन प्रसंगों का भण्डार है। कहा जाता है कि भगवान श्री कृष्ण की बाल–लीलाओं का निरूपण करने वाले महाकवि सूरदास हिन्दी के प्रथम बाल काव्य साहित्यकार थे। उन्होंने जिस सरल व रोचक ढंग से बाल–लीलाओं का वर्णन किया, वह आज भी बाल काव्य लेखन को नई दिशा प्रदान करने में सक्षम है। इसी प्रकार पंचतंत्र की कहानियों को सर्वाधिक प्राचीन सुव्यवस्थित बाल कहानी साहित्य माना जाता है। पंचतंत्र की कहानियाँ व्यवहारिक जीवन में सफल होने के गुणों को कहानियों के माध्यम से रूचिकर ढंग से बताती हैं। आज की बाल रचनायें उसी घटनात्मकता की देन हैं, जो इन प्राचीन साहित्यिक ग्रन्थों में वर्णित हैं। इन ग्रन्थों में नैतिक शिक्षा पर आधारित रचनायें सामयिक बाल साहित्य की गौरव निधि हैं। इन कथा–कहानियों व कविताओं के माध्यम से बच्चों में दिव्य और दुर्लभ गुणों का विकास हुआ है। आधुनिक काल में हिन्दी में बाल साहित्य विधा की शुरूआत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा 1882 में प्रकाशित 'बाल दर्पण' से मानी जाती रही है, पर इसका विधिवत आरम्भ 1915 में प्रकाशित 'शिशु' और 1917 में प्रकाशित 'बाल सखा' पत्रिका से हुआ।

बच्चों का साहित्य संसार बड़ा ही विस्तृत है। बाल साहित्य में कवितायें, कहानियाँ, नाटक, एकांकी, उपन्यास, जीवनी, ज्ञान–विज्ञान सम्बन्धी लेख, यात्रा संस्मरण इत्यादि सभी शामिल है। बस फर्क यह है कि जहाँ बड़ों के साहित्य में बड़ों की भाषा तथा बड़ों की भावभूमि व परिवेश का समावेश होता है, वहीं बाल साहित्य की भाषा सरल, रोचक व मनोरंजक होती है। बाल साहित्य का सृजन करते समय बाल–साहित्यकार को बच्चों की जिन्दगी में प्रवेश करना होता है। बाल साहित्य बच्चों की उम्र के साथ व उनकी मानसिकता के अनुरूप होता है, वहीं यह कभी बोझिल नहीं होता और बच्चे स्वतः इसके अध्ययन के प्रति प्रेरित होते हैं। वस्तुतः बच्चों में स्वस्थ अध्ययन की आदत डालने का भी यह एक नायाब तरीका है। अध्ययन करना मात्र एक बौद्धिक अनुभव ही नहीं है अपितु इससे भावनात्मक अनुभवों की भी प्राप्ति होती है। अध्ययन करते समय प्रसन्नता, हास्य, रूचि, उत्साह और महत्वाकांक्षा का भी विकास होता है, जो कि बाल मन के उन्नयन हेतु जरूरी है। सम्भव हो तो बच्चों को उपहार में अच्छी बाल पुस्तकें दी जायें और उनके जन्मदिन पर किसी अच्छी बाल पत्रिका की सदस्यता।

बाल साहित्य में सर्वाधिक प्रचलित विधा काव्य है क्योंकि कविता बच्चों को सहज रूप में प्रभावित कर उनके दिलो–दिमाग में उतर जाती है। विभिन्न आयु वर्गों की मानसिकता के हिसाब से बाल कवितायें लिखी जाती रही हैं। जहाँ पाँच वर्ष तक के बच्चों हेतु लिखी गयी कविताओं में तुकबन्दी व लयात्मकता पर जोर दिया जाता है, वहीं पाँच से बारह वर्ष तक के बच्चों हेतु लिखी गयी कविताओं में उनके परिवेश व वातावरण को भी सामान्य ज्ञान के नजरिये से उकेरा जाता है। जबकि बारह से सोलह वर्ष के बच्चों हेतु लिखी बाल कविताओं में उनकी आशाओं, अकांक्षाओं व उमंगों को प्रेरित किया जाता है। बाल साहित्य की एक अन्य प्रचलित विधा कहानी है। बाल कहानियों में जटिल से जटिल विषयों को रोचक व मनोरंजक घटनाक्रम के माध्यम से सहज भाषा में उकेरा जाता है। ऐसे में बाल मन इन घटनाओं के माध्यम से तथ्यों को भलीभाँति समझ लेता है और उनका चंचल मन तारतम्य रूपी घटनाक्रम से बँधकर एकाग्रता की दिशा में अग्रसर होता है। चूंकि बच्चों को अपने परिवेश से सम्बन्धित वस्तुयें भाती हैं, ऐसे में उनकी कल्पना इतनी उर्वर होती है कि थोड़े ही संकेतों के आधार पर वे कहानी के सभी पात्रों से तादातम्य स्थापित कर लेते हैं। बाल सुलभ मनोवृत्तियों के अनुरूप पशु–पक्षियों इत्यादि को पात्र बनाकर इन कहानियों के माध्यम से बच्चों को सत्य, अहिंसा, प्रेम, एकता, परोपकार, ईमानदार, दयालु, साहसी, पराक्रमी मधुर वचन, धैर्य, विश्व–बंधुत्व, पारस्परिक सद्भाव इत्यादि सामाजिक–नैतिक आदर्शों की तरफ और राष्ट्रभक्त बनने की तरफ उन्मुख किया जाता है। **'पंचतंत्र की कहानियाँ'** इसका सबसे प्रबल उदाहरण है। पंचतंत्र के लेखक विष्णु शर्मा ने मंदबुद्धि राजकुमारों को शिक्षा देने के लिये इन कहानियों की रचना की थी, जिसके माध्यम से राजकुमारां को लोक जीवन की व्यवहारिकता और उसमें सफल होने के सभी गुण सिखाये गये थे।

बच्चे स्वभाव से जिज्ञासु होते हैं, अतः जरूरत है उनकी जिज्ञासा को स्वस्थ रूप में हल किया जाय। जिस प्रकार कुम्हार मिट्टी के लांदे को खूबसूरत आकार देता है, उसी प्रकार बाल साहित्य बच्चों में स्वस्थ संस्कार रोपित करता है। आज बाल साहित्य पर यह आरोप लगाया जाता है कि बाल साहित्य नाम से जो कुछ छप रहा है उसमें मौलिकता और सार्थकता का अभाव है। यही नहीं ज्यादातर पत्र–पत्रिकाओं के सम्पादकों को बाल साहित्य की समझ ही नहीं, और वे जो कुछ छापते हैं, लोग उसे ही बाल साहित्य समझ कर उसका अनुसरण करने लग जाते हैं, जिससे बाल साहित्य की स्तरीयता प्रभावित होती है। इन पत्रिकाओं में बाल साहित्य आधारित दूरदर्शी सोच का अभाव है। आलोचना के नाम पर भी बाल साहित्य में मात्र पुस्तकों की समीक्षायें लिखी जा रही हैं। यही कारण है कि बाल साहित्यकार को रचनाओं में मनोरंजकता का पुट देते हुये यह भी सुनिश्चित करना पड़ता है कि उनमें किसी अंधविश्वास, कुसंस्कार, कुरीति व अभद्रता को प्रश्रय न मिले। यदि बच्चों पर किसी भी रूप में प्रतिबन्ध लगाया गया तो वे अधकचरे साहित्य और अधकचरे ज्ञान की तरफ आकर्षित हांगे, जो कि उनके विकास और अन्ततः स्वस्थ समाज के विकास में बाधक होगा। बच्चे आने वाले कल के कर्णधार हैं। बच्चों को प्राप्त शिक्षा, संस्कार और सामाजिक मूल्य ही कल के राष्ट्र का निर्माण करेंगे। इस कार्य में बाल साहित्य की प्रभावी भूमिका है, क्योंकि इसके माध्यम से ही बच्चों में तमाम अभिरूचियाँ और आदर्श पल्लवित व पुष्पित होते हैं। बच्चों में यदि अच्छा साहित्य पढ़ने की आरम्भ से आदत डाली जाये तो वे तमाम कुप्रवृत्तियों से वैसे ही बच जायेंगे। पर जरूरत है कि बाल साहित्य की आड़ में व्यवसायिक हितों को लेकर सतही मनोरंजन उपलब्ध कराने वाली पुस्तकों से सावधान रहा जाये। नैतिक शिक्षा के नाम पर ढपोरशंखी बातें पढ़ाने की बजाय सामाजिक व व्यवहारिक मूल्यों का ज्ञान कराया जाय। बच्चों के विकास में साहित्य और विज्ञान का बराबर महत्व है। विज्ञान जहाँ व्यक्ति को आत्म केन्द्रित और भौतिकवादी बनाता है वहीं साहित्य उसे सांस्कृतिक और मानवीय मूल्यों से संस्कारित करता है। ऐसे में अन्धविश्वास और पलायनवादी दृष्टिकोण पर आधारित साहित्य की बजाय उद्देश्यमूलक बाल साहित्य के सृजन की जरूरत है।

बाल साहित्य के क्षेत्र में यह सवाल तेजी से उठने लगा है कि आज बच्चों की ग्राह्य क्षमता, मानसिकता और परिवेश में जिस तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं, उनके अनुरूप बाल साहित्य नहीं रचा जा रहा है। इसका एक कारण बाल साहित्य विधा के प्रति सरकार की उदासीन सोच भी है। बाल साहित्य को विद्यालयों के पाठ्यक्रम में शामिल करने की जरूरत है और स्नातक–परास्नातक कक्षाओं में संकलित लेखकों–रचनाकारों के सम्पूर्ण कृतित्व की चर्चा में बाल साहित्य को भी जोड़ने की जरूरत है। हालात यह हैं कि प्रश्न–पत्रों में शायद ही कभी बाल साहित्य को लेकर प्रश्न पूछा गया हो। यही कारण है कि बड़े–बड़े आलोचक आज भी बाल साहित्य का नाम आते ही मुँह बिचका लेते हैं। दूसरी तरफ बाल साहित्यकारों को प्रोत्साहित करने और उनमें स्वस्थ प्रतिस्पर्धा कायम करने हेतु बाल साहित्य के नाम पर कुछ बड़े पुरस्कार भी आरम्भ करने की जरूरत है। भूमण्डलीकरण और उभोक्तावाद के इस दौर में बच्चों के खिलौने बदल गये हैं। इण्टरनेट व मीडिया ने भी बच्चों के संसार को बदलने में अहम् भूमिका निभायी है। नतीजन मोबाइल, टेलीवीजिन और कम्प्यूटर जैसी आधुनिक तकनीकों पर वे कम उम्र में ही हाथ आजमाने लगे हैं। सर्वसुलभ सुविधाओं, नगरीकरण, विज्ञान के नये प्रयोगों व टेक्नोलश्वजी के बढ़ते इस्तेमाल, शिक्षा और ज्ञान के बाजार में नये–नये फार्मूले इत्यादि के चलते बच्चे कम उम्र में ही अनुभव और अभिरूचियों के विस्तृत संसार से परिचित हो जाते हैं। नयी–नयी बातों को सीखने की ललक और नये एडवेन्चर उन्हें दिनों–ब–दिन एडवांस बना रहे हैं। उनकी दृष्टि प्रश्नात्मक है तो हृदय उद्गारात्मक। ऐसे में जरूरत है कि बच्चों को राजा–रानी, परियों और भूतों की कपोल कल्पित कहानियों से परे यथार्थवादी बाल साहित्य से परिचित कराया जाये और बाल साहित्य को गुणात्मक ह्रास से बचाया जाये। बच्चों में नयी जानकारियों के साथ नवीन सोच पैदा की जाये, नयी दिशाओं के साथ जीवन के तमाम आयामों से उन्हें रूबरू कराया जाये और बदलती दुनिया के साथ बदलते परिवेश में उन्हें नयी दशा और दिशा दी जाये। बाल–मानसिकता एवं ग्राह्यता के अनुरूप बच्चों को ज्ञान–विज्ञान की आधुनिकतम जीवनोपयोगी जानकारी दी जाये।

आज की पीढ़ी के बच्चे पिछली पीढ़ियों द्वारा पैदा की गयी विसंगतियों से भी टकरा रहे हैं, चाहे वह पर्यावरण असन्तुलन हो या बढ़ता प्रदूषण। भूमण्डलीकरण, निजीकरण और उदारीकरण के चलते तेजी से बदली सामाजिक–पारिवारिक–आर्थिक परिस्थितियों के कारण साहित्य में सामंजस्य और संतुलन स्थापना की जो सुगबुगाहट और बेचौनी परिलक्षित हुई, बाल साहित्य के क्षेत्र में भी उसका प्रभाव पड़ना लाजिमी है। अभिभावकां की मानसिकता व समस्यायें, संयुक्त परिवारों का विघटन, माँ–पिता दोनों का कमाऊ होना जैसे तत्व भी बच्चों पर प्रभाव डाल रहे हैं। ऐसे में बच्चों की मनोवैज्ञानिक समस्यायें और उनकी मनोभावनायें भी बाल साहित्य में उभरनी चाहिये। इन सब के बीच ही बच्चे एक स्वस्थ व प्रसन्नचित समाज की आकांक्षा कर सकते हैं।

कभी अज्ञेय ने बच्चों की दुनिया के बारे में कहा था कि–''भले ही बच्चा दुनिया का सर्वाधिक सम्वेदनशील यंत्र नहीं है पर वह चेतनशील प्राणी है और अपने परिवेश का समर्थ सर्जक भी। वह स्वयं स्वतन्त्र चेता है, क्रियाशील है एवं अपनी अंतः प्रेरणा से कार्य करने वाला है, जो कि अधिक स्थायी होता है। ''निश्चिततः बाल साहित्य को वक्त के साथ इन सभी चीजों को अपने दायरे में समेट कर उद्देश्यमूलक बनाना होगा। बाल साहित्य को बालकों में जीवन के उच्च मूल्यों व आदर्शो के प्रति निष्ठा जगाने, राष्ट्रीय आकांक्षाओं के अनुरूप संस्कार रोपित करने, जीवन के हर पल में उमंग भरने और बदलते परिवेश के साथ उनमें रचनात्मक कल्पनाशीलता व तदनुसार सृजन के प्रति प्रेरित करने वाला होना चाहिये। अच्छे बाल साहित्य के लिये जरूरी है कि साहित्यकार न केवल अपने अन्दर के बच्चे को जीवन्त रखे वरन् बच्चों की दुनिया से अपने को पूरी तरह आत्मसात् भी रखे। इसके अभाव में बाल साहित्य मात्र कोरा अभ्यास ही कहा जायेगा।

बाल मन पर पड़ता प्रभाव

अंकुर सिंह
हरदासीपुर, चंदवक
जौनपुर, उ. प्र.

गाँधी जी की जीवनी पढ़ रहा था और पढ़ने पर पाया की मोहन दास नामक बालक बचपन में सत्यवादी राजा हरिचन्द्र नामक चल–चित्र देखने पर पूरे जीवन सत्य बोलने का प्रण कर लेता हैं और सत्य के मार्ग पर आजीवन चल पड़ता है फिर विचार आता है कि आजकल के कोमल मन वाले बच्चों पर स्मार्टफोन के हिंसक गेमों, टीवी चौनल के अनेकों धारावाहिकों का उनके बचपन पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

आज के दौर में बच्चों के जीवन शैली को देखता हूं तो पता हूं कि उनका अधिकांश बचपन स्मार्ट फोन और टीवी पर व्यतीत होता है। इसके जिम्मेदार ईश्वर रूपी नन्हे बालक ही नहीं,अपितु उनके अभिभावक भी हैं। जो कामकाजी होने पर भी संयुक्त परिवार के जगह एकल परिवार में विश्वास रखते हैं और बच्चों को मनोरंजन के लिए उन्हें मोबाइल और टीवी के सामने बैठा देते है खुद लग जाते हैं अपने दूसरे कामों में, बच्चा भी एकल परिवार में नाना–नानी और दादा–दादी के कहानी, प्यार और संस्कार की तो दूर कि बात मां के लोरी से भी वंचित हो बंद कमरें में मोबाइल और टीवी के साथ अपना बचपन गुजार देता है।

अभिभावक सोचते हैं कि जब तक बच्चा स्मार्ट फोन, टीवी पर फंसा हैं तब तक जरूरी काम निपटा ले लेकिन उन्हें इसका तनिक भी आभास नहीं होता की उनके कामों के साथ–साथ उनके बच्चों का नाजुक बचपन भी निपट रहा है। एक रिपोर्ट के अनुसार 1 से 5 साल के बच्चों में शारीरिक विकास तेजी से होता हैं और मोबाइल टीवी पर समय बिताने के कारण वो बाकी अलग–अलग खेलों से दूर होते जाते हैं जिससे उनके शरीर का संर्वागीण विकास नहीं हो पता।

दिल्ली स्थित, ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेस (एम्स) द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार, भारत में 5 से 15 वर्ष की आयु वर्ग के 17 प्रतिशत बच्चे मायोपिया (निकट दृष्टि दोष) से पीड़ित हैं। ये रोग आमतौर पर मोबाइल, लैपटॉप पर ज्यादा समय बिताना, इलेक्ट्रॉनिक गैजेट्स को उपयोग करते समय उनसे बराबर दूरी ना होना, प्रकृतिक रोशनी में कम समय बिताने से मायोपिया से ग्रसित होने का समस्या बढ़ता है। क्योंकि आज के परिवेश में लोगों का सामाजिक दायरा भी कम होता जा रहा हैं लोग किसी से मेल–मिलाप ना पसंद करते हुए बंद कमरों में ज्यादा समय व्यतीत कर रहें जिससे अभिभावक के साथ

उनका बाल्य भी प्राकृतिक रोशनी से वंचित हो बंद कमरों के कृत्रिम रोशनी में जीवन बिताने में मजबूर है। दूसरा एक ही पोजीशन (स्थिति) में सिर झुकाये मोबाइल पर गेम खेलने के कारण बच्चों में सर्वाइकलगिया (गर्दन में दर्द) होने कि प्रबल संभावना होती है। और तो और आज के बच्चों का बचपन देखता हूं और फिर अपने बचपन के बारें में सोचता हूं जहां हमारा बचपन विलुप्ता के कगार पर पहुचे चुके खेलों कबड्डी, खो–खो, लुका–छिपी, ऊँची कूद जैसे के साथ–साथ क्रिकेट, फुटबाल, बालीबाल के साथ बीता, वही कल के भविष्य बच्चों का बचपन बंद कमरों में टीवी और स्मार्ट फोन पर बीत रहा जिससे उनका शारीरिक रूप से पूर्णतया विकास ना होने के साथ–साथ उनमें सामाजिकता कि कमी भी आती है। बाहर निकल कर बच्चे जब तक ना खेलेंगे, तब तक अपने परिवेश में बाकी बच्चों से दोस्ती भी ना कर पाएंगे और वो बचपन से ही संकुचित जीवन के आदि हो जायेंगे।

इन सब के साथ मोबाइल टीवी पर काफी ऐसी ज्ञानवर्धक कार्यक्रम हैं जो बच्चों के विकास के लिए अति–आवश्यक हैं इससे ऐतराज नहीं किया जा सकता लेकिन उपयुक्त बातों का ध्यान रखते हुए बच्चों के मोबाइल और टीवी के उपयोग का समय सीमित कर देना चाहिए।

अतः आजकल अभिभावक से इतना कहना चाहूँगा कि आपके घर का बच्चा आपका ही बच्चा नहीं है अपितु राष्ट्र की धरोहर भी है, जो कल देश के भविष्य कि दिशा का निर्धारण करेगा, इतिहास उठा कर देख लीजिए महात्मा गाँधी बचपन में भूत के डर के कारण अंधेरे में एक कदम नहीं बढ़ा पा रहें थे, इतने में बाहर खड़ी बूढ़ी दाई रंभा ने उनकी पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा राम का नाम लो भूत तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ पायेगा, फिर राम नाम का ऐसा चस्का लगा उन्हें कि मरते समय भी आखिरी शब्द भी उनके 'हे राम' निकला। जब बाल्य मन इतना ग्राही होता है तो सोचिए आपका बच्चा जब देखेगा की नोबिता जिद्द करके डोरेमोन से अपनी बात मनवा लेती है तो वो भी नोबिता की तरह जिद्दी बनेगा ना कि राम की तरह आज्ञाकारी।

शुभ मुहूर्त के लिए चौघड़िया देखकर कार्य करें।

दिन का चौघड़िया			प्रातः 6 से सायं 6 बजे तक				चौघड़िया	रात का चौघड़िया			सायं 6 से प्रातः 6 बजे तक			
रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	समय	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	6 से 7.30 तक	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	7.30 से 9 तक	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग
लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	9 से 10.30 तक	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	10.30 से 12 तक	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	12 से 1.30 तक	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	1.30 से 3 तक	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	3 से 4.30 तक	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	4.30 से 6 तक	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ

शुभ मुहूर्त : अमृत, शुभ, लाभ, चर हैं। | अशुभ मुहूर्त : उद्वेग, काल, रोग हैं।

दूषित प्रकार से कमाया गया धन ही है - दुर्योधन

डॉ. श्याम सुन्दर पाठक 'अनन्त'
लेखक, कवि, मोटीवेशनल स्पीकर,
असिस्टेंट कमिश्नर (वस्तु एवं सेवा कर)
उत्तर प्रदेश

श्लोक 2

सञ्जय उवाच :

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्युढं दुर्योधनस्तदा । आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत् ।।

अर्थ – सञ्जय बोले– उस समय वज्रव्यूह से खड़ी हुई पाण्डव सेना को देखकर राजा दुर्योधन द्रोणाचार्य के पास जाकर यह वचन बोला ।

गूढ़ अर्थ : सबसे पहला प्रश्न उठता है कि दुर्योधन कौरव पक्ष के सेनापति भीष्म पितामह के पास जाने की बजाए द्रोणाचार्य के पास क्यों जाता है ?

इसका पहला कारण तो ये है कि दुर्योधन को यह भरोसा था कि भीष्म तो उनके पितामह हैं ही, और चूँकि वे राजा की गद्दी पर बैठे व्यक्ति की रक्षा के लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं इसलिए वे तो कहीं जायेंगे नहीं , लेकिन द्रोणाचार्य को लेकर उसके मन में सन्देह था, क्योंकि द्रोणाचार्य का सबसे अधिक प्रेम अपने सबसे प्रिय शिष्य अर्जुन से ही था । इसलिए अपनी तरफ से अतिरिक्त सम्मान देने के लिए वह पहले उनके पास गया। भीष्म पितामह का दुर्योधन से कौटुम्बिक स्नेह था , इसलिए उसे भीष्म की ओर से कोई सन्देह ना था। चूँकि द्रोणाचार्य का दुर्योधन के साथ कोई कौटुम्बिक सम्बन्ध ना होकर केवल गुरु का ही नाता था, और यही नाता उनका पाण्डवों से भी था और कौरवों से अधिक पाण्डवों विशेषकर अर्जुन से था, अतः दुर्योधन ने द्रोणाचार्य को साधने की कोशिश की, इसलिए वह भीष्म को छोड़कर द्रोणाचार्य के पास गया। सञ्जय ने दुर्योधन के लिए राजा शब्द का प्रयोग किया, जबकि वह केवल राजकुमार था, लेकिन वास्तविक सत्ता व निर्णय लेने की शक्ति दुर्योधन के पास थी, इसलिए उसने दुर्योधन के लिए राजा शब्द का प्रयोग किया। पाण्डवों का सेना बड़े ही सुन्दर विन्यास में, एक भाव से एकता के प्रदर्शन करते हुए खड़ी थी, इसलिए वज्र के समान अजेय दिखाई पड़ रही थी । पाण्डवों की सेना में कोई मतभेद ना था, उनके पक्ष में धर्म था और स्वयं साक्षात् भगवान श्रीकृष्ण उनके पक्ष में थे, इसलिए वह संख्या में कम होने के बावजूद भी अधिक प्रभावशाली, ताकतवर और अजेय लग रही थी, इसलिए वह जानबूझकर द्रोणाचार्य के पास उनके शौर्य को बढ़ाने के लिए गया ताकि वह अपने सम्पूर्ण सामर्थ्य के साथ युद्ध करें ।

गूढ़ आध्यात्मिक अर्थ : दुर्योधन दो शब्दों से मिलकर बना है– दुर् अर्थात् दूषित, धन अर्थात् सम्पदा, अतः दुर्योधन का अर्थ हुआ दूषित या गलत प्रकार से कमाया गया धन। और यह तभी सम्भव है जब लालच हो। दुर्योधन सांसारिक इच्छा का प्रतीक है, तो कभी समाप्त नहीं होती। जब एक सांसारिक इच्छा पूरी होती है तो दूसरी जाग्रत हो जाती है। इसलिए सांसारिक इच्छाएँ पूर्ति होने पर घटती नहीं, बल्कि और अधिक बढ़ जाती हैं और लालच का रुप ले लेती हैं। धन बढ़ने पर तृप्ति नहीं मिलती बल्कि और मिले, और मिले ऐसा अन्तहीन लालच बढ़ता ही चला जाता है, और उस सांसारिक इच्छा या लालच की पूर्ति के लिए वह उचित– अनुचित मार्ग कुछ नहीं देखता। येन– केन– प्रकारेण सांसारिक इच्छा की पूर्ति ही

उसका उद्देश्य होता है। धर्म के मार्ग से कमाया गया थोड़ा भी धन सन्तोष और शान्ति देता है, जबकि अधर्म के मार्ग से कमाया गया धन निरन्तर लालच को बढ़ाता जाता है और उसकी पूर्ति के लिए वह कुछ भी अनर्थ करने को तैयार रहता है।

सांसारिक इच्छाएँ अपनी पूर्ति के लिए ऐसे व्यक्ति को चुनती हैं– जो दो तरफ हो, द्वैत भाव में हो । द्वैत का आचरण ही द्रोणाचार्य है। द्रोणाचार्य उभय पक्ष के गुरु हैं।

प्रश्न उठता है कि व्यक्ति गुरु के पास क्यों जाता है। तब जब उसको ये ज्ञान हो जाता है कि हम परमात्मा से अलग हो गए हैं, और जब उसे ऐसा भान हो जाता है तो उसकी प्राप्ति के लिए उसके मन में अजीब सी तड़प उठती है और तभी मनुष्य गुरु की तलाश में निकलता है। मनुष्य को ईश्वर से पृथक होने (जीव और परमात्मा) का ज्ञान ही द्वैत का भान है, और उस द्वैतभाव के समाधान के लिए वह गुरु के पास जाता है। चूँकि द्रोण उसी द्वैत भाव के प्रतीक हैं, इसलिए पूर्ण गुरु नहीं हैं। यही कारण है कि भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जब ब्रह्मज्ञान दिया तब वह जाना कि ईश्वर और जीव एक हैं और आत्मा का परमात्मा से मिलन का मार्ग क्या है। योगेश्वर भगवान श्रीकृष्ण पूर्ण सद्गुरु हैं। इसलिए उस द्वैत भाव को सत्य के ज्ञान के द्वारा समाप्त कराते हैं। (महाभारत में भी भगवान श्रीकृष्ण द्रोणाचार्य के वध के लिए सत्य के प्रतीक युधिष्ठिर को ही आगे करते हैं, इसका गूढ़ अर्थ यही है कि बिना सत्य को जाने द्वैत भाव समाप्त नहीं हो सकता)

इस श्लोक का एक और गूढ़ मर्म है।

दुर्योधन का अर्थ है : दुः युद्धं यः स अर्थात् जिससे युद्ध में लड़ना या जीतना कठिन है। दुर्योधन सासांरिक इच्छा का प्रतीक है, और सांसारिक इच्छा से लड़ना कठिन है। वह अपने अस्तित्व को बचाने के लिए हर सम्भव प्रयास करती है। उसके लिए वह सहारा लेती है– द्रोण का । द्रोण शब्द संस्कृत के द्रु शब्द से बना है जिसका अर्थ है– द्रवित कर देना। अतः द्रोण का अर्थ हुआ– वह जो द्रवित अवस्था में रहता है, और आप जानते ही होंगे कि द्रव की क्या विशेषता होती है। वह जिस भी पात्र में रखा जाए, उसी का रुप धारण कर लेता है। इसके अलावा द्रव हमेशा ऊपर से नीचे की ओर बहते हैं। द्रोण का जन्म भी कैसे हुआ ।

द्रोण अर्थात् जल रखने का बर्तन या पात्र में रख दिए गए ऋषि भरद्वाज के वीर्य से जो उत्पन्न हुआ, उसका नाम ऋषि ने द्रोण रखा। अतः द्रोण का स्वभाव है– जल (द्रव) की भाँति पात्र के हिसाब से आकार ले लेने वाला। और स्वभाव से अधोमुखी अर्थात् नीचे की ओर प्रवाहित होने वाला।

द्रोण प्रतीक हैं : विचार का, आदतों का, संस्कार का, आसक्ति का। मनुष्य के मस्तिष्क में सर्वप्रथम विचार ही उत्पन्न होता है। ये विचार धीरे– धीरे आदतों में तब्दील हो जाते हैं, और आदतें संस्कारों में। अच्छी आदतें अच्छे संस्कारों में, और बुरी आदतें बुरे संस्कारों में बदलती हैं और यही अच्छे या बुरे संस्कारों कर्मो के साथ मिलकर फल प्रदान करती हैं। संस्कार सिर्फ इसी जन्म के नहीं होते, बल्कि जन्मों– जन्मों के संस्कार एकत्र होते रहते हैं और समय पाकर कर्म के अनुसार प्रस्फुटित होकर परिणाम देते हैं।

आदतें आसानी से नहीं जातीं, विशेषकर बुरी आदतें। बुरी आदतों में एक आसक्ति होती है, जो अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए इतनी ताकत लगाती हैं कि व्यक्ति को बदलाव इतना कठिन और दुष्कर लगता है कि वह अपनी बुरी आदतों के साथ जीना अधिक सुखकर महसूस करता है।

द्रोणाचार्य के जीवन : चरित्र पर गौर करें तो पायेंगे कि द्रोणाचार्य का पूरा चरित्र जल के समान अधोगामी और जल की भांति आसक्ति से चिपके रहने वाला है, इसलिए इतने ज्ञानी और शस्त्र – शास्त्रों का ज्ञान होने के बावजूद भी वे सत्य के लिए ना लड़ सके और ना अन्याय (द्रौपदी का चीर– हरण) का विरोध कर सके ।

द्रोणाचार्य उत्कृष्ट और अजेय योद्धा हैं, शस्त्र विद्या में उनकी कोई सानी नहीं, मुनि अग्निवेश से उन्होंने आग्नेयास्त्र की शिक्षा ली, भगवान परशुराम से ब्रह्मास्त्र सहित समस्त दिव्य अस्त्रों की शिक्षा लेकर अद्वितीय बन गए, लेकिन फिर भी जब द्रौपदी का चीर– हरण हो रहा था तो भीष्म ने गोल–मोल उत्तर दिया, लेकिन द्रोणाचार्य तो बिल्कुल चुप्पी साध गए। आसक्ति या बुरी आदतें ऐसे ही व्यक्ति को एकदम नाकारा या स्तम्भित बना देती है। वो गलत का विरोध नहीं कर पाता। महाभारत युद्ध के समय भी उन्होंने यह कहकर कौरवों का साथ दिया कि मनुष्य को अर्थ का दास बनना पड़ता है , जहाँ से वह अर्थ प्राप्त करे, उसके प्रति निष्ठावान बने। अभिमन्यु वध के समय भी धर्म के आचरण के विरुद्ध उन्होंने अन्य छः महारथियों के साथ घेरकर उसको मारा। बुरी आदतें या संस्कार ऐसे ही होते हैं। द्रोणाचार्य जैसा अजेय योद्धा निकृष्टतापूर्वक अभिमन्यु वध में शामिल होते हैं, ये प्रतीक है कि आसक्ति, बुरी आदतें या बुरे विचार किस प्रकार विवेक, बुद्धि, ज्ञान सभी का अपहरण कर लेती हैं। आसक्ति के कारण ही वे अपने पुत्र अश्वत्थामा को छिपकर विशेष दिव्यास्त्रों का ज्ञान देते थे। आसक्तिवश अपात्र (अश्वत्थामा) को (ब्रह्मास्त्र का) दिया ज्ञान किस प्रकार सर्वनाश करा सकता है, महाभारत उसका उदाहरण है। यही बात एक साधक पर भी लागू होती है । एक साधक जब साधना करने बैठता है तो बुरी आदतें या बुरे संस्कार व्यक्ति को साधना करना इतना दुष्कर कर देते हैं कि साधक को थोड़ी देर की साधना भी युगों सी प्रतीत होने लगती है। जैसे ही एक साधक साधना हेतु आसन पर बैठता है, सांसारिक इच्छा (दुर्योधन), आदतों रुपी द्रोणाचार्य के पास जाती है और उसके सांसारिक सुखों के उन प्रलोभनों के बारे में बताती है, जो उसने कभी रसास्वादन किये हैं। ऐसी– ऐसी संसार की मधुर व मीठी लगने वाली बातें याद आती हैं कि साधना करना नीरस कार्य लगने लगता है। पिछले इन्द्रिय– भोगों के सुख की स्मृति दिलाकर उसे वापिस संसार की ओर खींचते हैं। ऐसे– ऐसे लोग याद आते हैं, जिनसे वर्षो पहले कभी मिले थे, सांसारिक इच्छाएँ (दुर्योधन) अपनी समस्त सेना के साथ (बुरी) आदतों (द्रोण) का सहारा ले साधना करने की संकल्प– शक्ति पर आक्रमण करती हैं, और साधक के पाँव उखाड़ने की पूरी कोशिश करती हैं। मन की चंचलता, सुस्ती, आलस्य, और तन्द्रा साधक को चारों तरफ से घेर लेती हैं। एक मिनट भी घंटों के समान लगने लगता है।

(क्रमशः)

संग्रहों में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ काव्य रचना एवं सर्वश्रेष्ठ लघु कथा को चयन समिति द्वारा चयनित रचनाकारों को प्रथक–प्रथक

प्रोत्साहन राशि का चेक, शाल एवं सम्मान पत्र

प्रदान कर 25 दिसम्बर 2022 को इंदौर (मध्य प्रदेश) में आयोजित होने वाले **अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह** में पुस्तक विमोचन के अवसर पर सम्मानित किया जाएगा।

दोनों पुस्तकों हेतु रचनाएँ आमंत्रित हैं — अन्तिम तिथि 15 नवम्बर 2022

- आपकी रचनाएँ स्वरचित, अप्रकाशित एवं मौलिक होनी चाहिये।
- आपके द्वारा प्रेषित चार रचनाओं में से चुनी गयी दो रचनाओं का प्रकाशन किया जायेगा।
- प्रकाशित पुस्तक की पाँच प्रतियाँ लेखक को डाक द्वारा निशुल्क उपहार स्वरूप प्रेषित की जायेगी।
- आप अतिरिक्त पुस्तकें भी मंगवा सकते हैं जो प्रकाशक संस्था आपको लागत मूल्य पर उपलब्ध करायेगी।
- पुस्तक विवरण : साईज – 5.25 x 8.5 इंच, हार्डबाउण्ड, रंगीन आवरण (लेमिनेटेड), इनर ब्लैक एवं व्हाईट होगा।
- यह पुस्तक आई.एस.बी.एन. के साथ प्रकाशित की जायेगी।

विशेष :

- काव्य रचना 20 पंक्तियों से अधिक नहीं हानी चाहिये (कम से कम चार रचनाएँ प्रेषित करनी आवश्यक है, जो एक या अधिक विषयों पर आधारित हो सकती है)।
- प्रत्येक लघु कथा शब्द सीमा अधिकतम 250 शब्द होनी चाहिये (कम से कम चार लघु कथाएँ प्रेषित करनी आवश्यक है, जो एक या अधिक विषयों पर आधारित हो सकती है)।
- रचनाओं का मुद्रण लेखक / लेखिका के नाम एवं फोटो के साथ किया जाएगा।
- लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाईल में टाईप करा कर ही भेजें। साथ में पी.डी.एफ. फाईल भी अपलोड करें।

अधिक जानकारी के लिये सम्पर्क करें : 7415410516

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

छप्पन भोग का रहस्य

डॉ. शारदा मेहता
स्वतंत्र लेखन
ऋषिनगर विस्तार,
उज्जैन (म.प्र.)

भारतीय संस्कृति में प्रत्येक परिवार में लगभग षड़रस युक्त भोजन बनाया जाता है। ये परिवार के सदस्यों के लिए सुपाच्य, शक्तिवर्धक तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने वाला होता है। इन षड़रसों के नाम हैं– १. मधुर, २. अम्ल, ३. लवण, ४. कटु, ५. तिक्त और ६. कषाय। भोजन के आवश्यक तत्व कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन तथा खनिज लवण ये सभी इस भोजन में निहित हैं। इस भोजन को बनाने में पवित्रता तथा स्वच्छता का विशेष ध्यान रखा जाता है। खाद्य सामग्री की शुद्धता भी अति आवश्यक होती है।

मंदिरों में छप्पन भोग परम्परा का निर्वहन बड़ी श्रद्धा–भक्ति के साथ किया जाता है। महिलाएँ अपने–अपने घरों से भोग सामग्री बना कर लाती हैं। भोग लगाया जाता है। समाज के सदस्य सपरिवार इस कार्यक्रम में सम्मिलित होते हैं। पूजा आरती करते हैं। छप्पन भोग प्रसाद का वितरण किया जाता है। द्वारकाधीश मंदिर, श्रीनाथ जी मंदिर तथा अन्य मंदिरों में बड़ी संख्या में भक्तजन एकत्रित होकर छप्पन भोग कार्यक्रम का सफलतापूर्वक संचालन करते हैं। छप्पन भोग के सम्बन्ध में भगवान श्री कृष्ण से सम्बन्धित कई कथाएँ प्रचलित हैं।

एक बार भारी वर्षा होने से गोप गोपियाँ तथा गौधन अत्यधिक परेशान थे। श्री कृष्ण ने गोवर्द्धन पर्वत को अपनी सबसे छोटी ऊँगली से उठा लिया। अतिवृष्टि से बचने के लिए सभी पर्वत के नीचे खड़े हो गए। यह क्रम सात दिनों तक चला। सभी भूख से व्याकुल हो रहे थे। आठवें दिन जब वर्षा रूकी तो सभी बाहर निकले। माता यशोदा तथा ब्रजवासियों ने इन

सात दिनों की भोज्य सामग्री बनाई। तभी से छप्पन भोग परम्परा चली आ रही है।

दूसरी कथा के अनुसार माता यशोदा कृष्ण भगवान को दिन में आठों पहर भोजन खिलाती थी और हर बार भिन्न–भिन्न प्रकार की भोजन सामग्री बनाती थी। इस कारण छप्पन भोग परम्परा प्रारम्भ हुई।

तीसरी कथा के अनुसार भगवान कृष्ण गोलोक में राधाजी के साथ अष्टदल कमल पर बैठते थे। कमल की तीन परतें थीं। प्रथम परत में आठ पँखुड़ियां थीं। प्रत्येक पँखुड़ी पर एक–एक सखी बैठती थीं। द्वितीय परत पर सोलह पंखुड़ियाँ थी। उन पर सोलह सखियाँ बैठती थीं। तृतीय परत पर बत्तीस पँखुड़ियों पर बत्तीस सखियाँ बैठी थीं। इस प्रकार कुल ०८+१६+३२=५६ सखियों के सम्मान में छप्पन भोग लगाने की परम्परा का निर्वहन होता है। इस भोजन से सभी सखियाँ तृप्त हो जाती थीं।

चौथी कथा के अनुसार श्रीकृष्ण को पति रूप में पाने के लिए गोपियों ने यमुना नदी में एक माह तक प्रातः वेला में स्नान किया तथा माँ कात्यायिनी का पूजन अपनी मनोकामना को पूर्ण करने के लिए किया। श्रीकृष्ण ने उन्हें इस मनोरथ पूर्ति का आशीर्वाद भी दे दिया। गोपियों ने उसी की खुशी में छप्पन प्रकार के सुस्वादु भोजन निर्मित कर श्रीकृष्ण को भोग लगाया।

इन सभी कथाओं के आधार पर यह प्रतीत होता है कि छप्पन भोग लगाने की परम्परा भगवान श्रीकृष्ण के समय से प्रारम्भ हुई है। सनातन परम्परा में हमारे प्रत्येक घर में प्रतिदिन शुद्धतापूर्वक जो भोजन निर्मित किया जाता है उसका पूजन के पश्चात थाली परोस कर नैवेद्य लगाया जाता है, उसके पश्चात् ही घर के सदस्य भोजन ग्रहण करते हैं। भगवान के भोग में प्याज, लहसुन का प्रयोग वर्जित है। पवित्रता भी अति आवश्यक है। किसी कारणवश घर में भोजन न बनने पर भगवान को दूध, फल, मेवे तथा मिठाई का नैवेद्य लगा दिया जाता है।

श्रावण मास, श्रीगणेश चतुर्थी के दस दिवसीय कार्यक्रम तथा मातृशक्ति पूजन नवरात्रि में भी विभिन्न मंदिरों में छप्पन भोग लगाए जाते हैं। धर्म प्रेमी श्रद्धालु तन मन धन से इस कार्यक्रम में बड़ी उमंग से सहभागी बनते हैं।

मन्दिरों में छप्पन भोग में बनने वाले समस्त खाद्य पदार्थ भारतीय भोजन के षड़रस पर आधारित ही हैं। इनमें मीठा, नमकीन, तीखा, खट्टा, कसैला, कड़वा सभी रस का सम्मिलन हो जाता है जो मानव मात्र को स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक है। विभिन्न प्रकार की मिठाइयाँ, तरह–तरह के नमकीन, चटपटी शाक भाजी, भिन्न–भिन्न प्रकार के रायते, कढ़ी, अलग–अलग प्रकार की चटनियाँ, अचार, पापड़ दाल–चावल सभी पौष्टिकता से भरपूर भोजन के आवश्यक तत्व से परिपूर्ण हैं। ■

दशरथ नंदन राम

डॉ. सुनीता सिंह 'सुधा'
लेखिका, कवियत्री, गीतकार
वाराणसी

जन–जनके नायक हुए, दशरथ नंदन राम ।
समदर्शी व्यवहार से, किए कोटि सत काम ।।
धन्य–धन्य श्रीराम प्रभु, धन्य अयोध्या– धाम ।
धन्य धरा बहती जहाँ, सरयू सरि अविराम ।।

कोटि सूर्य–सा आभ मुख, कमल नयन तन श्याम।
लिए समधुर मुस्कान दृग, दशरथ नंदन राम ।।
सागर सा संयम लिए, करुणा नीति निधान ।
त्याग समर्पण मूर्ति के, धर्म पराक्रम खान ।।

कण–कण बसते राम हैं, धर्म सनातन राम ।
सर्वश्रेष्ठ मानव धरा, मानव रक्षा काम ।।
चाह मिलन की मन लिए, युद्ध किए श्री राम ।
रण अधर्म पर धर्म का, विजय हुआ श्री नाम ।।

दुखियों के प्रभु दुख हरे, चखते शबरी बेर ।
सत्य मार्ग पर नित चले, किए निशाचर ढेर ।।
सत्य वृत्तियाँ राम हैं, राम एक ही नाम ।
राम शील गुण धर्म से, बना अयोध्या– धाम ।।

राम–राम सत्कार है, राम–राम दुख बोध ।
राम–राम जीवंत पल, राम–राम भव शोध ।।
चाह रखो यदि जीत की, लड़ो नित्य ही युद्ध ।
रौंद अहित जीवन सदा, विजय वरण कर शुद्ध ।।

विजया दशमी पर्व है, अमर विजय का कथ्य ।
संयम बल पुरुषार्थ से , राम प्रशस्त सुपथ्य ।।

सुख एक सौभाग्य का प्रतीक

सौभाग्य सुन्दरी व्रत

श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा
सेवानिवृत्त प्रधानाचार्या
राजकीय बालिका
विद्यालय, लखनऊ

सनातन धर्म में व्रत : उपवास का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है, यह ना केवल ईश्वर के प्रति आस्था एवं विश्वास को सुदृढ़ करता है बल्कि तन और मन की शुद्धि के लिए भी अत्यंत लाभकारी है। सच्चाई तो यह है कि व्रत रखने से दैहिक, मानसिक और आत्मिक संताप से मुक्ति तो मिलती ही है साथ ही ग्रह नक्षत्रों के दुष्प्रभाव से भी बचाव होता है और शरीर भी स्वस्थ रहता है। व्रत रखने का मूल उद्देश्य स्वयं की संकल्पशक्ति को विकसित करना होता है क्योंकि संकल्प वान व्यक्ति में सकारात्मकता, दृढ़ता एवं निष्ठा निहित होती है जो कि आदर्श एवं सफल जीवन जीने के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

धन्य है हमारी आदि शक्ति भारतीय नारी जो सदैव तन, मन एवं प्राण से परिवार कल्याण हेतु सुख, वैभव, यश, शक्ति एवं आरोग्य की आशा करती है। वह अपने परिवार के कल्याण, पति की दीर्घायु एवं सन्तान के सुखी जीवन के लिए विभिन्न व्रत एवं उपवास को धारण करती हैं। इन्हीं व्रत एवं उपवास की खूबसूरत श्रृंखला में सुख और सौभाग्य को देने वाला व्रत है 'सौभाग्य सुंदरी व्रत'।

'सौभाग्य सुंदरी व्रत' सुख एवं अखण्ड सौभाग्य की आकांक्षा पूर्ण करने का त्यौहार है, यह व्रत सुहागन महिलाओं द्वारा सफल एवं खुशहाल दाम्पत्य जीवन की कामना एवं संतान के कल्याण हेतु और अविवाहित महिलाओं द्वारा मनचाहा वर पाने हेतु किया जाता है क्योंकि यह व्रत सौभाग्यशाली स्त्रियों को अखंड सौभाग्य प्रदान करने वाला है एवं दांपत्य जीवन में आने वाली बाधाओं को हरने वाला है। यह व्रत भारतीय महिलाओं के लिए करवा चौथ जितना ही महत्वपूर्ण होता है यह उत्तर एवं दक्षिण भारत में मनाया जाने वाला एक महत्वपूर्ण त्यौहार है। यह व्रत अथवा तपस्या अगहन माह के कृष्ण पक्ष की तृतीया तिथि से संबंधित होता है। इस दिन चंद्रमा विशेष मघा नक्षत्र के साथ संरेखित होता है।

भव्य पुराण के अनुसार देवी सती ने अपने पिता के यज्ञानुष्ठान में उनके द्वारा पति शिवजी के अपमान से दुखी होकर जलते हुए हवनकुण्ड में कूद कर अपने शरीर का त्याग कर दिया था साथ ही उन्होंने अपने पिता से वादा किया था कि वे हर जन्म में शिव की पत्नी के रूप में ही वापस आएगीं। इस प्रकार अगले जन्म में वे पार्वती के नाम से जानी गईं। मान्यता है कि मां पार्वती का जन्म इसी दिन हुआ था। शिवजी को पति के रूप में पाने के लिए मां पार्वती ने श्रावण माह में कठिन तपस्या किया था फलतः शिवजी ने उन्हें पत्नी के रूप में वरण किया था। सौभाग्य

सुंदरी व्रत देवी पार्वती, मां दुर्गा माता को प्रसन्न करने के लिए सरल एवं सर्वसुलभ तरीका है। यह एक व्रत होने के साथ–साथ एक अनुष्ठान भी होता है।

सौभाग्य सुंदरी व्रत करने वाली महिलाएं प्रातः क्रियाओं से निवृत्त होकर सुंदर परिधानों को धारण कर एवं आभूषणों के साथ सोलह श्रृंगार से श्रृंगारित होकर मां गौरी के व्रत का संकल्प लेती हैं। पूजन हेतु लकड़ी की चौकी को गंगाजल से पवित्र कर उस पर लाल कपड़े में लिपटी हुई शिव एवं पार्वती की मूर्ति रखकर उनके मध्य में पान के पत्ते पर मौली लपेट कर सुपाड़ी रखी जाती है, यह हृदय के आकार का पान का पत्ता परस्पर आध्यात्मिक संबंधों का प्रतीक है एवं सुपारी मानसिक संबंधों की प्रगाढ़ता को प्रदर्शित करती है। कलश पर दीपक प्रज्ज्वलित कर मौली में लिपटा हुआ नारियल, कुमकुम, रोली, लोंग, सुपाड़ी भी अर्पित की जाती है। पूजन सामग्री में सूखे मेवे और सात प्रकार के अनाज अर्पित करने का विधान भी है। मां गौरी को सुन्दर वस्त्र एवं सोलह श्रृंगार अर्पित कर लाल पुष्पों से उनका श्रृंगार करते हैं एवं शिवजी को गंगाजल दूध, दही, चीनी एवं शहद से स्नान करवा कर अक्षत एवं पुष्प अर्पित करते है। पूजनक्रिया में सर्वप्रथम आदिदेव गणेश जी का पूजन किया जाता है फिर नवग्रह की पूजन के उपरांत शिव – पार्वती का उनके परिवार सहित पूजन किया जाता है। पूजन के समय निम्न मंत्र का उच्चारण किया जाता है –

ऊँ उमाये नमः

'देवी देइ उमे गौरी त्राहि मांग करुणानिधे

माम् अपराधा शानतव्य भक्ति मुक्ति प्रदा भव'

पूजन के उपरांत एक अथवा कई ब्राम्हणों को भोजन करवा कर यथाशक्ति दक्षिणा भी दी जाती है। व्रत के अगले दिन पूजन सामग्री का यथोचित विसर्जन करना आवश्यक होता है। इसके लिए कलश का जल तुलसी को अर्पित करते हैं, नारियल के ऊपर बंधी मौली, अर्पित पुष्प एवं अन्य पूजन सामग्री को प्रवाहित जल में विसर्जन कर पूजा करने वाली महिला माँ गौरी से प्रार्थना करती है कि 'हे माता मेरे पापों को नष्ट कर मुझे सुख – सौभाग्य प्रदान करें, मुझे सर्व सिद्धियां प्रदान करें, मेरे वैवाहिक जीवन में आने वाली हर बाधाओं को दूर करें, मेरे परिवार को सुखी एवं समृद्ध बनाए रखने का आशीर्वाद प्रदान करें। एवं पूजनक्रिया में हुई त्रुटियों एवं कमियों के लिये मैं क्षमाप्रार्थी हूं'। इस प्रकार यह व्रत अपनी पूर्णता को प्राप्त करता है।

सौभाग्य सुंदरी व्रत का सार्थक फल प्राप्त करने के लिए महागौरी की प्रार्थना सदैव शुद्ध एवं शान्त हृदय से करनी चाहिए। इस विशेष दिवस पर मां गौरी की ऊर्जा को पृथ्वी पर अधिक गहराई से अनुभव किया जा सकता है। इस वर्ष यह व्रत 11 नवम्बर 2022 को किया जाएगा तो आइये इस संसार रुपी भव सागर को सुगमता और सरलता से पार करने के लिए इस सौभाग्य सुन्दरी व्रत को धारण कर अपने सम्पूर्ण परिवार का कल्याण कर स्वयं को भी कृतार्थ करें।

परिवर्तन

सुजाता प्रसाद
लेखिका,
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
मोटिवेशनल ओरेटर
नई दिल्ली

ऐसा कुछ भी नहीं है, जो बदल नहीं रहा। परिवर्तन संसार का नियम है इसलिए परिवर्तन के इस चक्र में खुद को ढाल लेना ही जीवन की खूबसूरती है। अगर आप बदलाव के खिलाफ हैं तो आपको समझना चाहिए आप जीवन की बुनियादी प्रक्रिया के ही खिलाफ हैं। ऐसे में आप हमेशा हर तरह के दुःख और पीड़ा को न्योता देने लगते हैं। क्योंकि जब आप बदलाव के खिलाफ होंगे तब निराशा अपने आप ही आ जाती है। और अगर निराशा आ गई, तो ये अपने आप अवसाद में बदल जाएगी। इसलिए हमें समझना चाहिए कि जब तक हम ब्रह्मांड की भौतिक प्रक्रिया का एक हिस्सा हैं, तब तक हर चीज

बार बार परिवर्तन के मुश्किल कूचों से
कैनवास जीवन का रंगों से निखर जाता है।
सिर धड़ विलग के, टूटे कितने खिलौने छुटपन के
पर अंदर का बचपन, बोलो कब खो पाता है।

हिना का एक एक पत्ता शिलाओं पर घिस घिस कर
छोड़कर रंग हरा, हथेली पर लाल सुर्ख बिखर जाता है।
झर जाते हैं पत्ते झर झर के पतझड़ के हौले हौले
फिर आता है बसंत, उपवन विहंस कर खिल जाता है।

भोर की केसरिया साड़ी बदल लेती है जब रंग अपना
धूप पहन लेती है तब जार्जेट साड़ी भर के रंग सुनहरा।
चांदनी लिबास में है रजनी, कभी ओढ़ लेती स्याह घुप्प अंधेरा
अंधेरा ठहरता नहीं, पहन धूप का वसन, आता है जब सबेरा।

भगवान श्रीरामसीता का

विवाहोत्सव

डॉ. दिग्विजयकुमार शर्मा
शिक्षाविद, साहित्यकार पत्रकार,
स्तम्भ लेखक, समाजसेवी,
मोटिवेशनल स्पीकर
आगरा, उत्तर प्रदेश

समस्त विश्व के इतिहास, साहित्य और संस्कृति में राम के समान अन्य कोई नायक कभी नहीं रहा न कभी हुआ। वे मर्यादा पुरुषोत्तम, आदर्श राजा, आज्ञाकारी पुत्र और आदर्श पति होने के साथ ही प्रबल योद्धा भी हैं। उनकी छवि हर किसी को प्रेरित और प्रभावित करती है। उनके संबंध में अनेक ग्रन्थ लिखे गए, जिनमें क्षेत्र, परंपरा, रुचि तथा लेखकीय भावनाओं के अनुरूप कुछ अंतर भी आए। यह स्वाभाविक था। लेकिन उनके जीवन और संवेदन पर पूर्व से आज तक सैकड़ों ग्रंथ लिखे गए हैं। विश्व के आदिग्रन्थ ऋग्वेद से शुरू कर आधुनिक दौर में रचे जा रहे दृष्य – श्रव्य के साहित्य में हर कहीं रामसीता चरित का चित्रण और उल्लेख अवश्य मिलता है।

ऋग्वेद की एक ऋचा में सम्पूर्ण रामकथा संक्षेप में समाहित कर दी गयी है। ऋचा इस प्रकार है–

भद्रो भद्रया सचमानः आगात, स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात्।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन, रूशद्भिर्भर्वर्णेरभि राममस्थात् *(ऋग्वेद 10–3–3)*

अर्थ– भजनीय राम, सीता के साथ वन में आए। सीता को चुराने के लिए राम और लक्ष्मण की अनुपस्थिति में रावण आया। वह सीता को चुरा कर ले गया। राम द्वारा रावण के मारे जाने पर अग्नि देवता राम की पत्नी सीता के साथ राम के सामने तेज के साथ उपस्थित हुए और असली सीता को उन्हें सौंप दिया।

रामकथा के अनेक पात्रों का वर्णन वैदिक साहित्य में भी देखने को मिलता है। उदाहरणार्थ इक्ष्वाकु (अर्थर्ववेद 19–39–9), दशरथ (ऋग्वेद 1–126–4), कैकेय (शतपथ ब्राह्मण 10–6–1–2) तथा जनक (शतपथ ब्राह्मण) आदि। सम्भव है कि तत्कालीन भारत में इस नाम के अन्य पात्र भी रहे हों। उनके साथ जुड़े गुण उन्हें रामकथा से संबंधित करते अवश्य प्रतीत होते हैं, परन्तु यह उल्लेखनीय है कि राम–जन्म की घटना, वैदिक साहित्य के बहुत बाद की है।

यह भी सम्भव है कि कालान्तर में इन नामों से संबधित अंश वैदिक साहित्य में जोड़ दिये गए हों। वाल्मिकी रामायण के आदिकाव्य और रामकथा के प्रथम गान के बावजूद तुलसीकृत 'रामचरित मानस' लोकप्रियता की दृष्टि से सबसे आगे है। लोकभाषा में होने के कारण इसने रामकथा को जनसाधारण में अत्यधिक लोकप्रिय बना दिया। इसमें भक्ति–भाव की प्रधानता है तथा राम का ईश्वरत्व पूरी तरह उभर आया है। सीता राम के विवाह भी संभवतया तुलसीकृत रामायण के कारण ही प्रतिष्ठित और वंदित हुआ।

सीता–राम का विवाह प्रसंग पढ़ने सुनने और भक्ति रस का आस्वाद लेने में तो अत्यंत मधुर है ही, साथ ही उसमें एक आश्वासन भी निहित है। आश्वासन यह कि जो इस मांगलिक प्रसंग का गायन, श्रवण करते हैं, उनके जीवन में आनंद उत्साह की प्राप्ति होती है। विवाह संबंधी कठिनाइयों को दूर करने के लिए श्रद्धालु इस प्रसंग का पाठ करते–कराते हैं।

सीता मैया के अवतरण से विवाह तक के प्रसंगों में आध्यात्मिकता, भावनात्मकता एवं

आधुनिकता के रंगों का समावेश गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस में किया है, वह अत्यंत ही ज्ञानवर्धक और मनमोहक है। जिसे पढ़कर सहज ही हृदयंगम किया जा सकता है।

विवाह पंचमी के दिन ही प्रभुश्रीराम माता जानकी का विवाह हुआ था। इस पावन अवसर पर प्रभुश्रीराम माता जानकी के विवाहोत्सव की कथा का विस्तार से रसास्वादन कीजिये।

रामचरितमानस में बाबा तुलसी ने लिखा है

निज गिरा पावनि करन कारन राम जसु तुलसीं कह्यो।
रघुबीर चरित अपार बारिधि पारु कबि कौनें लह्यो।।
उपबीत ब्याह उछाह मंगल सुनि जे सादर गावहीं।
बैदेहि राम प्रसाद ते जन सर्बदा सुखु पावहीं।।

भावार्थ : अपनी वाणी को पवित्र करने के लिए तुलसी ने राम का यश कहा है। (नहीं तो) श्री रघुनाथजी का चरित्र अपार समुद्र है, किस कवि ने उसका पार पाया है? जो लोग यज्ञोपवीत और विवाह के मंगलमय उत्सव का वर्णन आदर के साथ सुनकर गावेंगे, वे लोग श्री जानकीजी और श्री रामजी की कृपा से सदा सुख पावेंगे।

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु।।

भावार्थ : श्री सीताजी और श्री रघुनाथजी के विवाह प्रसंग को जो लोग प्रेमपूर्वक गाएँ–सुनेंगे, उनके लिए सदा उत्साह (आनंद) ही उत्साह है, क्योंकि श्री रामचन्द्रजी का यश मंगल का धाम है।

अहिल्या जी पर कृपा करके भगवान राम–लक्ष्मण मुनि विश्वामित्र के साथ चले हैं लेकिन आज प्रभु को हर्ष नही हैं थोड़ा दुःख हैं। की आज मैंने मुनिवर की पत्नी को चरणों से स्पर्श किया हैं। हालाँकि होना तो नही चाहिए लेकिन फिर भी भगवान हैं ना। दुःख हैं की मैं एक क्षत्रिय कुल में आया हूँ और एक ब्राह्मण की पत्नी को मेरे पैरों का स्पर्श हुआ हैं। फिर भगवान गंगा जी के तट पर पहुंचे हैं। वहां पर विश्वामित्र जी ने गंगा माँ की कथा सुनाई हैं की किस प्रकार से गंगा जी धरती पर आई। तब प्रभु ने ऋषियों सहित (गंगाजी में) स्नान किया। ब्राह्मणों ने भाँति–भाँति के दान पाए। गंगा स्नान करने के बाद भगवान प्रसन्न होकर चले और सोच रहे हैं की जो थोड़ा बहुत पाप हुआ होगा वो गंगा स्नान से दूर हो गया होगा। और फिर भगवान जनकपुर के निकट पहुँच गए हैं।

जिस नगर की सोभा का गोस्वामी जी ने सुंदर वर्णन किया हैं। श्री रामजी ने जब जनकपुर की शोभा देखी, तब वे छोटे भाई लक्ष्मण सहित अत्यन्त हर्षित हुए। वहाँ अनेकों बावलियाँ, कुएँ, नदी और तालाब हैं, जिनमें अमृत के समान जल है और मणियों की सीढ़ियाँ (बनी हुई) हैं। जहाँ नगर के (सभी) स्त्री–पुरुष सुंदर, पवित्र, साधु स्वभाव वाले, धर्मात्मा, ज्ञानी और गुणवान हैं।

भगवान विश्वामित्र जी एक साथ एक आम के बगीचे में ठहरे हैं। और मुनि ने कहा की मैं यहाँ बैठा हूँ तुम दोनों भाई जाकर फूल ढूंढिए। मुझे पूजा करनी हैं। विश्वामित्र जी एक सुंदर भूमिका तैयार कर रहे हैं। भगवान को फुलवाड़ी लेने के लिए भेज दिया हैं।

इधर जनक जी को खबर हुई हैं तो तुरंत विश्वामित्र जी से मिलने तुरंत आये हैं। इनके साथ में विद्वान, ब्राह्मण और मंत्री भी हैं। विश्वामित्र जी को बहुत सम्मान दिया हैं। चरण धोये हैं। और आसान पर बिठाया हैं। जब सब बैठ गए हैं तभी दोनों भाई वहां आ गए हैं। विश्वामित्र जी ऐसे ही चाहते थे की जब सारी सभा बैठी हो तब राम और लक्ष्मण आएं। और इसी तरह से हुआ।

जब दोनों भाई आये तो उनका रूप देखकर सभी दंग रह गए और जनन जी समेत सारी सभा खड़ी हो गई हैं। दोनों भाइयों को देखकर सभी सुखी हुए। सबके नेत्रों में आनंद और प्रेम के आँसू उमड़ पड़े और शरीर रोमांचित हो उठे। रामजी को देखकर विदेह (जनक) विशेष रूप से विदेह (देह की सुध–बुध से रहित) हो गए।

अब जनक जी ने पूछ लिया हैं की ये दोनों सुंदर बालक कौन हैं? जिनका दर्शन करते ही मेरे मन ने जबर्दस्ती ब्रह्मसुख को त्याग दिया है। इनका दर्शन करने के बाद मेरे मन में प्रेम उमड़ रहा हैं।

कहहु नाथ सुंदर दोउ बालक।
मुनिकुल तिलक कि नृपकुल पालक।।
इन्हहि बिलोकत अति अनुरागा।
बरबस ब्रह्मसुखहि मन त्यागा।।

जनक जी ने अपने प्रेम को योग–भोग रूपी डिब्बे के बीच में बंद करके रखा हुआ था। वो आज जाग्रत हो गया हैं। और बार–बार विश्वामित्र जी पूछ रहे हैं ये कौन हैं? विश्वामित्र जी कहते हैं–

ए प्रिय सबहि जहाँ लगि प्रानी।
मन मुसुकाहिं रामु सुनि बानी।।

जहाँ तक संसार में लोग हैं ना ये सबको प्यारे लगते हैं। मुनि की रहस्य भरी वाणी सुनकर श्री रामजी मन ही मन मुस्कुराते हैं हँसकर मानो संकेत करते हैं कि रहस्य खोलिए नहीं। भगवान सोच रहे हैं की ये भेद ना खोल दें की मैं भगवान हूँ।

जनक जी सोच रहे हैं की मैं पूछ रहा हूँ ये कौन हैं? और मुनि कहते हैं ये सबको प्यारे लगते हैं।

तब मुनि ने कहा– ये रघुकुल मणि महाराज दशरथ के पुत्र हैं। मेरे यज्ञ को पूरा करने के लिए राजा ने इन्हें मेरे साथ भेजा है। राम और लक्ष्मण दोनों श्रेष्ठ भाई रूप, शील और बल के धाम हैं। सारा जगत (इस बात का) साक्षी है कि इन्होंने युद्ध में असुरों को जीतकर मेरे यज्ञ की रक्षा की है।

ये सुंदर श्याम और गौर वर्ण के दोनों भाई आनंद को भी आनंद देने वाले हैं।

सुंदर स्याम गौर दोउ भ्राता। आनँदहू के आनँद दाता।।

मानो आज मुनि इस बात का जनक जी को संकेत कर रहे हैं की इन्होने मेरा यज्ञ तो पूर्ण करवा दिया हैं तुम चिंता मत करो तुम्हारा भी यज्ञ भी ये ही पूरा करवाएंगे।

इसके बाद जनक जी इनको जनकपुर में लेकर आये हैं। और एक सुंदर महल जो सब समय (सभी ऋतुओं में) सुखदायक था,

वहाँ राजा ने उन्हें ले जाकर ठहराया। संत–महात्मा बताते हैं की ये जानकी जी (सीता जी) का निवास हैं। और जानकी को अपने महल में बुला लिया है। रघुकुल के शिरोमणि प्रभु श्री रामचन्द्रजी ऋषियों के साथ भोजन और विश्राम करके भाई लक्ष्मण समेत बैठे।

गोस्वामी जी कहते हैं की जब दोपहर हुई तो लक्ष्मण जी के मन में एक लालसा जगी हैं। क्यों ना हम जनकपुर देख कर आएं? परन्तु प्रभु श्री रामचन्द्रजी का डर है और फिर मुनि से भी सकुचाते हैं, इसलिए कुछ बोल नही पाते हैं और मन ही मन मुस्कुरा रहे हैं।

एक बात सोचने की हैं की लक्ष्मण जी के ह्रदय में आज तक कोई लालसा नही जगी हैं। बस एक ही लालसा हैं की भगवान राम के चरणों में प्रीति जगी रहे। लेकिन आज क्यों लालसा जगी हैं। इसका एक कारण हैं जो संत महात्मा बताते हैं– लक्ष्मण जी कहते हैं ये मेरी माँ का नगर हैं। क्योंकि लक्ष्मण सीता जी को माँ ही कहते थे। और कौन होगा जिसका मन अपने ननिहाल को देखने का ना करे? बस इसलिए आज लालसा लगी हैं। लेकिन भगवान राम जान गए हैं आज लक्ष्मण की अभिलाषा। अब रामजी ने गुरुदेव को कह दिया हैं कि –

नाथ लखनु पुरु देखन चहहीं। प्रभु सकोच डर प्रगट न कहहीं।।
जौं राउर आयसु मैं पावौं। नगर देखाइ तुरत लै आवौं।।

हे गुरुदेव! आज मेरा लक्ष्मण नगर देखना चाहते हैं, लेकिन आप के डर और संकोच के कारण बोल नही पा रहा हैं। यदि आपकी आज्ञा पाऊँ, तो मैं इनको नगर दिखलाकर तुरंत ही वापस ले आऊँ। गुरूजी कहते हैं – अच्छा ठीक हैं अगर लक्ष्मण नगर देखना चाहता हैं तो उसे भेज दो। जनक जी के नौकर खड़े हैं मैं उन्हें बोल देता हूँ और वो दिखाकर ले आएंगे। राम जी कहते हैं– नही, नही, गुरुदेव बात ऐसी हैं यदि मैं दिखाने चला जाता तो? मैं साथ चला जाऊं?

गुरुदेव बोले– बेटा, देखना उसे हैं, दिखाएंगे जनक जी के नौकर। तुम क्यों परेशान हो रहे हो? तुम क्या करोगे? आज गुरुदेव रामजी के मन की भी देखना चाह रहे हैं।

राम जी बोले गुरुदेव , अगर मैं साथ जाता तो अच्छे से दिखा कर लाता। गुरुदेव बोले की अच्छा, तुम पहले से जनकपुर देख चुके हो क्या? क्योंकि वो ही दिखायेगा जिसने खुद देखा हो। रामजी ने संकेत किया– गुरुदेव, लखन छोटा हैं। कहीं नगर देखने के चक्कर में ज्यादा देर ना लगा दे। अगर मैं जाऊंगा ना, तो लक्ष्मण को तुरंत ले आऊंगा। गुरुदेव ने आज्ञा दे दी हैं। और कहा हैं अपने सुंदर मुख दिखलाकर सब नगर निवासियों के नेत्रों को सफल करो। दोनों भाई मुनि के चरणकमलों की वंदना करके चले हैं। आज सबसे पहले बालकों ने भगवान के रूप का दर्शन किया है। और बालक इनके साथ हो लिए हैं।

एक सखी कहती हैं ए दोऊ दसरथ के ढोटा। ये दसरथ के पुत्र हैं। लक्ष्मण जी कहते हैं भैया ये तो अपने पिताजी को जानती हैं देखूं की कौन हैं? राम जी कहते हैं नही लक्ष्मण ।

फिर वो कहती हैं एक राम हैं और एक लक्ष्मण हैं। राम जी की माँ कौसल्या हैं और लक्ष्मण की सुमित्रा है। अब लक्ष्मण बोले की भैया ये तो अपने नाम और माता का नाम भी जानती हैं। अब तो देखना ही पड़ेगा। भगवान बोले सावधान रहना ऊपर बिलकुल मत देखना। क्योंकि मर्यादा नही हैं ना। तभी एक जनकपुर की मिथलानी बोली की हमे लगता हैं ये दोनों भाई बहरे हैं। हम इतना बोल रही हैं ये हमारी ओर देख ही नही रहे हैं। तभी दूसरी बोली की मुझे लगता हैं की बहरे ही नही गूंगे भी हैं। क्योंकि ये आपस में बात भी नही कर रहे हैं इशारे ही कर रहे हैं।

लक्ष्मण जी बोले की प्रभु अब इज्जत बहुत खराब हो रही है। हमे गूंगा, बहरा बना दिया है। रामजी आप एक नजर ऊपर डाल दो। तभी भगवान ने एक नजर उन पर डाली हैं और मिथिलापुर के नर–नारियां, बालक, वृद्ध सब निहाल हो गए हैं। सबने भगवान के रूप रस का पान किया है।

इसके बाद भगवान ने वह स्थान देखा हैं जहाँ पर धनुष यज्ञ का कार्यक्रम होगा। बहुत लंबा–चौड़ा सुंदर ढाला हुआ पक्का आँगन था। चारों ओर सोने के बड़े–बड़े मंच बने थे, जिन पर राजा लोग बैठेंगे। उनके पीछे समीप ही चारों ओर दूसरे मचानों का मंडलाकार घेरा सुशोभित था। नगर के बालक कोमल वचन कह–कहकर आदरपूर्वक प्रभु श्री रामचन्द्रजी को यज्ञशाला की रचना दिखला रहे हैं।

श्री रामजी भक्ति के कारण धनुष यज्ञ शाला को आश्चर्य के साथ देख रहे हैं। इस प्रकार सब कौतुक (विचित्र रचना) देखकर वे गुरु के पास चले। अगर देर हो गई तो गुरूजी नाराज हो जायेंगे। फिर भगवान ने कोमल, मधुर और सुंदर बातें कहकर बालकों को जबर्दस्ती विदा किया फिर भय, प्रेम, विनय और बड़े संकोच के साथ दोनों भाई गुरु के चरण कमलों में सिर नवाकर आज्ञा पाकर बैठे। भगवान ने संध्यावंदन किया है। फिर रात्रि के 2 प्रहर तक भगवान की प्राचीन कथाओं को कहा है और फिर मुनि के चरण दबाये हैं। तब श्रेष्ठ मुनि ने जाकर शयन किया। मुनि के बार बार कहने पर भगवान भी सोने चले गए हैं।

गुरुदेव विश्वामित्र जी ने राम–लक्ष्मण का परिचय जनक आदि लोगों से करवाया। अब भगवान प्रातः काल उठे है और स्नान कर गुरूजी की पूजा की है। गुरुदेव ने उन्हें फूलवाड़ी के लिए भेजा है। गुरु की आज्ञा पाकर दोनों भाई फूल लेने चले। भगवान फुलवारी के लिए पधारे हैं। और भगवान मधुर–मधुर फूल चुन रहे हैं। उसी समय जनकनन्दनी श्री सीता जी का वहां आगमन हुआ हैं। और वहां पर एक सखी ने भगवान को देखा है–एक सखी सिय संगु बिहाई। गई रही देखन फुलवाई।

एक सखी सीताजी का साथ छोड़कर फुलवाड़ी देखने चली गई थी। और अपनी सुध–बुध खो बैठी है दौड़कर सीताजी के पास गई। और कहती हैं 2 बहुत प्यारे हैं–

स्याम गौर किमि कहौं बखानी। गिरा अनयन नयन बिनु बानी।।

एक श्याम हैं और एक गोरे हैं मैं कैसे उनके रूप का वर्णन करूँ? क्योंकि जिन आखों ने देखा हैं वो बोल नही सकती और

जिसको जुबान हैं वो देख नही सकती है। क्योंकि शब्दों से प्रेम को व्यक्त नही किया जा सकता है। फिर भी जैसे तैसे सीताजी को बताया है।

अब सीताजी भगवान का दर्शन पाने के लिए चली हैं।

कंकनकिंकिनिनूपुरधुनिसुनि।कहतलखनसनरामुहृदयँगुनि।। मानहुँ मदन दुंदुभी दीन्ही। मनसा बिस्व बिजय कहँ कीन्ही।।

सीता जी के जब चल रही हैं तो उनके नुपुर से अलोकिक ध्वनि आ रही है। जब भगवान ने इस शब्द को सुना है तो रामजी के हृदय में हलचल हो गई हैं और लक्ष्मण को कहते हैं– अरे लक्ष्मण! ये वही जनकनन्दनी हैं जिनके लिए यज्ञ हो रहा है।

लक्ष्मण जी बोले की मुझे क्यों बता रहे हो, आप ही देखो। क्योंकि लक्ष्मण की तो माँ हैं और उनका ध्यान तो बस चरणों में है।

लेकिन कोई भी मर्यादा नही टूटी है यहाँ बहुत अद्भुत मिलान है।

रामकोदेखकरकेजनकनन्दनी,बगियामेंखड़ीकीखड़ीरहगई। राम देखे सिया, सिया राम को , चारों अँखियाँ लड़ी की लड़ी रह गई।।

बस मन में दोनों के प्रेम जग गया है। यों तो रामजी छोटे भाई से बातें कर रहे हैं, पर मन सीताजी के रूप में लुभाया हुआ उनके मुखरूपी कमल के छबि रूप मकरंद रस को भौंरे की तरह पी रहा है।

सीताजी चकित होकर चारों ओर देख रही हैं। आप रामचरितमानस जी में पढ़ सकते हैं गोस्वामी जी ने कितना सुंदर इनके मिलान का वर्णन दिया है।

तभी एक सखी कहती हैं की बहुत देर हो गई है हमें चलना चाहिए। सखी की यह रहस्यभरी वाणी सुनकर सीताजी सकुचा गई। देर हो गई जान उन्हें माता का भय लगा। बहुत धीरज धरकर वे श्री रामचन्द्रजी को हृदय में ले आईं और उनका ध्यान करती हुई अपने को पिता के अधीन जानकर लौट चलीं।

अब सीताजी महल में आकर सोच रही हैं ये शिव जी का धनुष कितना कठोर है भगवान इसको किस प्रकार तोड़ पाएंगे। सीताजी भवानी माँ के मंदिर में गई और भगवान की वंदना की है–

जय जय गिरिबरराज किसोरी। जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता। जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

हे ! श्रेष्ठ पर्वतों के राजा हिमाचल की पुत्री पार्वती! आपकी जय हो, जय हो, हे महादेवजी के मुख रूपी चन्द्रमा की (ओर टकटकी लगाकर देखने वाली) चकोरी! आपकी जय हो, हे हाथी के मुख वाले गणेशजी और छह मुख वाले स्वामिकार्तिकजी की माता! हे जगज्जननी! हे बिजली की सी कान्तियुक्त शरीर वाली! आपकी जय हो!

नैतिकता

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
उत्तर प्रदेश

आजकल हर कोई करता है, नैतिकता की बात,
अपने से कभी न करता, कोई इसकी शुरुआत।
सलाह देने के पहले, हम खुद पर इसे आजमाए,
खुशियों की मिलेगी हमें, निश्चित सलोनी सौगात।।

नैतिकता, ईमानदारी, मनुजता, सभ्यता व संस्कार,
कहने में अच्छे लगें, हम न करते इसका व्यवहार।
निजस्वार्थ की धरा हो रही, नितदिन खूब हरी–भरी,
मैं ही फूलूँ–फलूँ, इसी में संकुचित हो रहे मेरे विचार।।

नैतिकता की बातें करने वाले, असल में न अपनाते,
यथार्थ में कुछ और जीवन, सत्यता कभी न बताते।
इसीलिए लोगों का सत्य पर, विश्वास कम हुआ है,
दिखावे के आवरण में, हम रिश्तों को यूँ भूल जाते।।

अपनी प्रगति के लिए, अनैतिक को जायज ठहराते,
हम सत्यपथ पर चल रहे, बस दूजों को गलत बताते।
छोटे लाभ के लिए, दूजों के खुशियों का गला घोंटते,
जीवन भर झूठे रहे, सब को सत्य की भाषा सिखाते।।

अनैतिक कार्यों में लिप्त होकर, खूब हो रहा विकास,
जय–जयकार हो रही, ज्ञानपुंज के वे बन रहे प्रकाश।
सद अनुसरण करने वालों का, कहीं न ठौर–ठिकाना,
घुट–घुट कर जीवन जी रहे, धीरे–धीरे हो जाते निराश।।

सत्कर्म की प्रवृत्ति के अनुसरण का सत्य

मानव जीवन के सर्वांगीण विकास की सुनिश्चितता

डॉ. बी. के. मेधावी शुक्ला
(पूर्व अनुसंधान अध्येता)
गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

" सृष्टि में मनुष्य के ' अस्तित्व की स्थिति ' को विकसित करने का कार्य ' धर्म – कर्म ' के सिद्धांत एवं व्यवहार द्वारा नीतिगत तरीके से संपन्न हो सका क्योंकि इस मार्ग में स्व – कल्याण के सात्विक उपाय सम्मिलित रहते हैं जो व्यक्ति को परहित की ओर ले जाने में अभिप्रेरणा प्रदान करते रहते हैं । जीवन में एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होती है जब व्यक्ति को ' अध्यात्म– पुरुषार्थ ' का सहारा लेना पड़ता है क्योंकि उसे लगता है कि आत्मा के उत्थान के लिए कुछ अलग से प्रयास करना चाहिए तब वह आत्मिक उन्नयन हेतु आध्यात्मिक अनुसंधान करते हुए सत्कर्म की प्रवृत्ति का अनुसरण एवं अनुकरण करने लगता है जो उसके सर्वांगीण विकास से जुड़ा होता है। स्वयं के अस्तित्व की रक्षा , निजी जीवन के विकास का पक्ष एवं आत्मा के उत्थान की स्थिति के पश्चात् स्व – स्वरुप को चरम उत्कर्ष पर देखने की इच्छा शक्ति व्यक्ति को ' राजयोग – मौन ' की ओर सहज ही ले आती है जहाँ से 'आत्मा के अमरत्व का अध्ययन ' मनुष्य को आनंद की अवस्था में पहुंचा देता है। राजयोग का वैविध्य और मानव जीवन – शैली का सहसंबंध अत्यधिक पवित्र होता है जिसमें धर्म सत्ता का भाव अहिंसक बनने के स्वरुप को भय के कारण नहीं बल्कि आध्यात्मिक शक्तियों की स्वीकृति से प्रेम स्वरुप होकर साधक का साध्य तक पहुँचने का अनुष्ठान है। "

श्रेष्ठता की प्रवृत्ति में रूपांतरण : प्रस्तुत्त आलेख में मानवीय प्रवृत्तियों के उन पक्षों की विवेचना करने का प्रयास किया गया है जिससे मानवता के उच्च शिखर पर पहुँचने का व्यावहारिक स्वरुप, प्रामाणिकता से मुखरित किया जा सके। मनुष्य जीवन की प्राप्ति होना व्यक्ति के लिए एकांगी स्थिति का प्रतीक नहीं , लेकिन इस बहुमूल्य जीवन का सर्वांगीण विकास करने की इच्छा शक्ति में जीवन – दर्शन , जीवन – उत्साह एवं जीवन – लक्ष्य का समायोजन बहुआयामी चिन्तन का विराट स्वरुप है । स्वयं को धरती पर विचरण करने की मंशा से उपर उठकर निजी जीवन की मनोवृत्ति से श्रेष्ठ कर्म करने की आत्मिक स्थिति, व्यक्ति को सत्कर्म की प्रवृत्ति का अनुसरण करने के लिए अभिप्रेरित करती है ।

इस विषय की मौलिकता का स्तर उस समय बढ़ जाता है जब आत्मा के अजर , अमर एवं अविनाशी स्वरुप की अनुभूति पूर्णतया अमरत्व के सन्दर्भ में होती है और जीवन की गतिशीलता जो आत्मा के लिए नित्य, सत्य एवं प्रकाशवान है अर्थात् गुण, शक्ति और जीवन मूल्य की प्राप्ति हेतु पुरुषार्थ की व्यावहारिकता में स्वयं को समर्पित कर देना है। जीवन की सहजता, सरलता एवं विनम्रता का स्वरुप, आत्म ज्ञान के व्यवहार में आने से सुनिश्चित हो जाता है जो व्यक्ति को आत्मिक उच्चता की प्राप्ति हेतु सत्कर्म की ओर अभिमुखित करता है। श्रेष्ठता की प्रवृत्ति में रूपांतरण हो जाने के पश्चात् जीवन में पवित्रता का 'अनुसरण होने के साथ – साथ अनुकरण भी ' नियमित जीवन की सूक्ष्म स्थितियों में समाविष्ट हो जाता है।

मनुष्य के द्वारा जीवन : दर्शन के अध्यात्म को स्वीकार कर लेना इस सत्य की पुष्टि है जिसमें व्यक्तिगत जीवन में सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक संदर्भो की व्यावहारिक संकल्पना के प्रति गहरी आस्था का प्रमाण प्रस्तुत किया गया है । इस आलेख का केन्द्रीय भाव मानव जीवन के द्वारा ज्ञान एवं कर्मेन्द्रियों से अच्छा देखना, अच्छा बोलना, अच्छा सुनना, अच्छा सोचना एवं अच्छा कर्म करना है क्योंकि स्वयं के सर्वांगीण विकास हेतु सत्कर्म की प्रवृति का अनुसरण करने के अतिरिक्त शेष कोई विकल्प नहीं है । आत्मा के द्वारा ' श्रेष्ठ संकल्प एवं श्रेष्ठ विकल्प ' को उसकी ऊंचाई से निर्धारित कर लिया गया है जो जीवन की व्यावहारिकता को सर्वांगीण विकास से सम्बद्ध करके स्वीकारने में अपने विश्वास को व्यक्त करते हुए आत्मा के अमरत्व को ' आत्म स्वरुप ' की श्रेष्ठ स्थिति के लिए प्रमुख रूप से उत्तरदायी मानते हैं।

जीवन के सर्वांगीण विकास का पक्ष : मानव जीवन में उपलब्धियों की प्राप्ति को सर्वोपरि स्वरुप में स्वीकार किया जाता है जो कई बार व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर प्राप्त होती हैं तथा जिन्हें सामान्यतः भौतिकता से जोड़कर देखा जाता है। विकास की प्रक्रिया में संतुलित रूप से जीवन को विकसित करने के मापदंड व्यक्ति के सम्मुख उपस्थित होते हैं और विभिन्न क्षेत्र विशेष का आवश्यकता के अनुसार ज्ञान को प्राप्त करना तथा स्वयं को मध्य में रखकर विधिवत तरीके से जीवन को पूर्ण करना ही व्यक्ति का उद्देश्य बन जाता है जिसके लिए उसके द्वारा यथा शक्ति प्रयास एवं संतुष्टि की स्थितियों का निर्माण किया जाता है। जीवन के सर्वांगीण विकास के पक्ष पर कार्य करने हेतु अपनी क्षमताओं की पहचान तथा उसके क्रमिक विकास में अकादमिक शिक्षा के साथ – साथ जीवन के अन्य पक्षों अर्थात् व्यावहारिक शिक्षा तथा अनुसंधान शिक्षा की पूर्णता के अतिरिक्त एक ऐसी तकनीकी शिक्षा का विकास स्वयं की आवश्यकता, इच्छा एवं मनः स्थिति की अनुकूलता को ध्यान में रखकर ग्रहण करना जिससे स्वयं को व्यावहारिक स्वरुप में आनंद प्रदान किया जा सके।

व्यक्तिगत जीवन की विश्लेषणात्मक शक्ति को स्वीकार करने पर पता चलता है कि किस प्रकार के पुरुषार्थ मनुष्य को स्वयं की संतुष्टता से सर्व की संतुष्टता तक पहुंचाते हैं और व्यक्ति जीवन के सर्वांगीण विकास के चरम लक्ष्य को प्राप्त करता हुआ स्वयं की व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक विकास की यात्रा को कुशलता से पूर्ण कर लेता है। अब मनुष्य के सम्मुख एक प्रश्न उपस्थित होता है कि स्वयं के सर्वांगीण विकास की व्यक्तिगत स्थिति क्या सत्कर्म की प्रवृत्ति का अनुसरण करने के लिए अंतरू प्रेरणा प्रदान करती है? जीवन दर्शन का अध्यात्म व्यक्ति को मन, बुद्धि एवं संस्कार के परिवर्तन से इतना सशक्त बनाना चाहता है कि व्यक्ति के कर्म, पुरुषार्थ एवं भाग्य का परिष्कार सुनिश्चित हो जाए तथा वह आत्मा की शक्ति को अनुभव कर सके। आध्यात्मिक विकास की पूर्णता को प्राप्त करने के लिए मनुष्य सत्कर्म की मूलभूत प्रवृत्तियों के अनुसरण की ओर इसलिए उन्मुख होता है क्योंकि उसे स्वयं के भीतर चेतना, चिन्तन एवं पुण्य का निर्माण करना होता है जिससे वह जीवन के सदगुणों को अपनाते हुए महान आत्मा , धर्मात्मा तथा देवात्मा की श्रेष्ठता से स्वयं को सुशोभित करते हुए स्वयं के जीवन को धन्यता में परिणित कर सके।

जीवन के सर्वांगीण विकास का पक्ष इतना व्यापक होता है कि व्यक्ति के लिए सामाजिक संदर्भो की स्थित्ति इतनी बाध्यकारी होती है कि उसे चेतन, अवचेतन एवं अचेतन मन की गहराई में जाकर स्वयं को सक्षम बनाने के लिए लक्ष्य, उत्साह एवं जीवन दर्शन के यथार्थ को मनोवैज्ञानिक रूप से स्वीकार करना पड़ता है। कई बार बाह्य स्वरुप में ऐसा लगता है कि कुछ विशेष व्यक्ति ही क्यों सकारात्मक, समर्थ एवं महान चिन्तन की ओर प्रवृत्त होते हैं शेष नहीं और चाहकर भी वह ऐसी अवस्थाओं से नहीं गुजरते हैं? अतः उन्हें श्रेष्ठ, शुभ एवं पवित्र विचार की उच्चता के संबंध में ज्ञान नहीं अथवा धर्मगत भाव और विचार पक्ष पुण्य कर्म के उदित नहीं होने के सत्य को प्रकट करते हैं जो 'पवित्रता' के अभाव को व्यवहार में दर्शा देता है और पुनरू पुरुषार्थ के शक्तिशाली आयाम को अपनी ' साधना ' के द्वारा प्राप्त करके व्यक्ति सत्कर्म की प्रवृत्ति का अनुसरण करने लगता है जो उसके सर्वांगीण विकास का आधार होता है।

मानव जीवन में सत्कर्म की प्रवृत्ति के अनुसरण की समझ धर्म से प्राप्त हुई तथा श्रेष्ठ कर्म से अध्यात्म तक व्यक्ति पहुँच गया और जीवन के सर्वांगीण विकास की प्रक्रिया को अपनाने के पश्चात् आत्मिक उत्कर्ष को भी प्राप्त कर लिया लेकिन आत्मा के अमरत्व का सन्दर्भ एवं प्रसंग अभी शेष है। आध्यात्मिक अनुसंधान अध्ययन की मनरू स्थिति मनुष्य आत्माओं को राजयोग से मौन की ओर ले जाती है जहाँ से 'आत्म – तत्व' को 'ज्ञान – तत्व' से मुक्ति प्राप्त हो जाती है तथा बुद्धि से जुड़ा मानव मस्तिष्क 'शांति की अवस्था' से गुजरने लगता है और साधक का मौन मनुष्य को 'बोध – तत्व' से जीवन मुक्ति प्रदान कर देता है जिससे हृदय से संबद्ध 'भाव' मौन के स्वरुप में परिणित हो जाता है। अतः आत्मा के अमरत्व का भाव जगत मनुष्य को स्वयं के ' सर्वांगीण विकास ' की प्रक्रिया में ले जाने का कारक बनता है और यह आत्मा की उच्चता व्यक्ति को सत्कर्म की प्रवृत्ति के अनुसरण के लिए चिरन्तर रूप से प्रेरणा प्रदान करती रहती है।

सामूहिक अथवा दूसरों की संपत्ति का विनाश करके हम स्वयं नष्ट होते जा रहे हैं

सीताराम गुप्ता
पीतम पुरा, दिल्ली

मानस के उत्तरकांड में गोस्वामी तुलसीदास एक स्थान पर लिखते हैं कि :

पर संपदा बिनासि नसाहीं, जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं।

अर्थात् दूसरों की संपत्ति को नष्ट करने वाले स्वयं नष्ट हो जाते हैं जैसे खेती का नाश करने के बाद ओला स्वयं भी नष्ट हो जाता है। आज के संदर्भ में तुलसीदास की ये पंक्ति अत्यंत प्रासंगिक व विचारणीय है। बात आज के बिगड़ते हुए भौतिक परिवेश अथवा पर्यावरण प्रदूषण की हो अथवा हमारी जीवन शैली अथवा उदात्त जीवन मूल्यों की हम आत्मघाती हो चुके हैं। हम जिस डाल पर बैठे हैं उसी को काट रहे हैं। इसके अतिरिक्त अपने लाभ के लिए अथवा दूसरों को हानि पहुँचाने के लिए भी हम दूसरों का अहित करने में कम आनंद नहीं लेते लेकिन वास्तविकता ये है कि हमारा इस प्रकार का आचरण दूसरों के साथ–साथ हमारा भी उतना ही अहित करता है जितना दूसरों का। दूसरों का अहित करने या होने देने के प्रयास में कई बार तो हम अपना सर्वनाश ही कर बैठते हैं।

एक कहानी याद आ रही है। एक माली और कुम्हार पास–पास रहते थे। माली सब्जियाँ उगाता था तो कुम्हार मिट्टी के बरतन बनाता था। उन दोनों के पास एक ऊँट था जिस पर वे दोनों ही अपना सामान लादकर पास के कस्बे में ले जाकर बेच देते। एक बार दोनों ऊँट पर सामान लादकर कस्बे की ओर जा रहे थे। ऊँट की पीठ पर एक ओर माली की सब्जियाँ लदी हुई थीं तो दूसरी ओर कुम्हार के बरतन लदे हुए थे। माली ऊँट की रस्सी को पकड़े हुए आगे–आगे चल रहा था तो कुम्हार ऊँट के पीछे–पीछे। तभी अचानक ऊँट ने अपनी लंबी गरदन पीछे की ओर घुमाई और सब्जियाँ खाने लगा। कुम्हार ने ऊँट को सब्जियाँ खाते हुए देखा पर रोका नहीं। उसने अपने मन में कहा कि ऊँट माली की सब्जियाँ खा रहा है तो इससे मुझे तो कोई

नुकसान नहीं होगा। ऊँट मेरे बरतन तो खाने से रहा फिर मैं क्यों इसे सब्जियाँ खाने से रोकूँ।

कुछ ही देर में ऊँट काफी सब्जियाँ खा गया जिससे ऊँट पर लदे हुए सामान का संतुलन बिगड़ गया और सारा सामान नीचे गिर गया। गिरने से शेष सब्जियाँ तो बच गई पर कुम्हार के सारे बरतन चकनाचूर हो गए। बरतन टूटने के बाद कुम्हार को भान हुआ कि यदि वो ऊँट को सब्जियाँ नहीं खाने देता तो उसके बरतन भी नहीं टूटते लेकिन अब पछताना बेकार था। यही स्थिति आज हम सबकी हो चुकी है। हम दूसरों का या सामूहिक नुकसान रोकने के लिए बिलकुल आगे नहीं आते और इसके परिणामस्वरूप हमारा जो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष नुकसान होता है उसे वहन करने को अभिशप्त हैं। ये संपूर्ण विश्व हमारी सामूहिक संपत्ति ही तो है। इस पृथ्वी पर उपलब्ध सभी प्रकृतिक संसाधनों को बचाना हमारा ही दायित्व है। जो लोग इन्हें नष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं उन्हें रोकना भी हमारा ही दायित्व है।

हालात इतने खराब हैं कि पर्यावरण प्रदूषण की स्थिति को देखते हुए इस बार उच्च न्यायालय ने दिल्ली व राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में पटाखों की बिक्री व प्रयोग पर पूर्ण रूप से प्रतिबंध लगा दिया था लेकिन वास्तविकता ये है कि प्रतिबंध के वावजूद पटाखे खूब बिके और खूब चलाए गए। परिणामस्वरूप प्रदूषण का स्तर खतरनाक से भी ऊपर पहुँच गया। इससे क्या निष्कर्ष निकलता है। यही कि कुछ लोगों की भूमिका अत्यंत नकारात्मक एवं जीवनविरोधी है। वे दूसरों के विनाश का कारण बनने के साथ-साथ स्वयं भी नष्ट होंगे इसमें संदेह लेकिन अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए इन लोगों को रोकना भी हमारा ही दायित्व है। ये सरल नहीं लेकिन अनिवार्य है क्योंकि ये हमारे अस्तित्व की रक्षा के साथ-साथ हमारे बच्चों और बुजुर्गों के स्वास्थ्य से भी जुड़ा है। साथ ही ये असंख्य रोगियों की स्थिति से भी जुड़ा है।

कुछ लोग त्योहारों पर पटाखे चलाने को धर्म से जोड़कर लोगों को भ्रमित कर रहे हैं। पटाखे चलाने का किसी धर्म से कोई संबंध नहीं है। साथ ही प्रसन्नता के लिए पटाखे चलाने का भी कोई औचित्य नहीं। पटाखों से मनुष्य ही नहीं प्रकृति भी बुरी तरह से प्रभावित होती है। शोर व प्रदूषण से पशु-पक्षी परेशान हो जाते हैं। इससे जैव-विविधता को भी नुकसान पहुँचता है। कुछ शोध बतलाते हैं कि पटाखे छुड़ाना मनुष्य की हिंसक प्रवृत्ति को भी प्रदर्शित करता है। प्रायः देखने में आता है कि अधिकांश लोग दूसरों को डराने के लिए चुपचाप पटाखे चला देते हैं और जब दूसरा डर या सहम जाता है तो उन्हें बहुत खुशी मिलती है। ये हिंसा और आतंक का ही दूसरा रूप है। चुनावों में जीत के बाद जिस तरह से आतिशबाजी की जाती है उसमें जीत की खुशी कम तथा विरोधियों व आम लोगों पर अपने आतंक का प्रभाव छोड़ना अधिक होता है।

आज हालात इतने बिगड़ चुके हैं कि कुछ लोग देश छोड़कर स्थायी रूप से विदेशों में बसने के लिए जा रहे हैं। कब तक और कहाँ तक भागते फिरेंगे? आज इस देश को नरक बना दिया है तो आगे जहाँ रहेंगे उसके साथ भी कमोबेश ऐसा ही करेंगे। लेकिन सब लोग देश छोड़कर भी अन्यत्र नहीं जा सकते। यदि हालात और बिगड़े तो क्या होगा? हम क्या करेंगे? वास्तव में हम कुछ नहीं कर पाएँगे और घुट-घुटकर मर जाएँगे। प्रश्न उठता है कि हम इसमें क्या कर सकते हैं। आज हमारे जीवन का एक मात्र उद्देश्य खूब कमाना और खूब खर्च करना हो गया है। हमें अपने इस उद्देश्य को बदलना होगा। इसके कारण ही आज हमारी जीवनशैली पूरी तरह से विकृत हो चुकी है। रही-सही कसर उपभोक्तावाद ने पूरी कर दी है। आज हम ऐसी अनेक वस्तुओं का प्रयोग कर रहे हैं जिनकी हमें बिलकुल भी ज़रूरत नहीं है। आराम व विलासिता की वस्तुओं ने हमें निष्क्रिय बना दिया है। फास्ट फूड ने हमें रोगी बना दिया है।

गलत खानपान व गलत आदतें हमारे स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। अधिक वस्तुओं के उपभोग के कारण अधिक उत्पादन किया जा रहा है। अधिक उत्पादन के कारण उद्योगों का विस्तार हो रहा है। यही सब समस्यों का कारण है। यदि हमने स्वयं को नहीं बदला तो हमारा नहीं तो हमारी अगली पीढ़ियों का घुट-घुटकर मरना निश्चित है। आज भी प्रति वर्ष असंख्य व्यक्ति प्रदूषण के कारण अकाल मृत्यु का शिकार हो रहे हैं। बीमारियाँ बढ़ती ही जा रही हैं। हवा हो या पानी हो सब प्रदूशित हैं। खाद्य पदार्थ विषाक्त होते जा रहे हैं। हमें विभिन्न माध्यमों से प्रकृति को नष्ट करने के इस दुष्चक्र को तोड़ना होगा। ये तभी संभव है जब हम अपनी जीवन शैली को परिवर्तित करें। हमें प्रकृति की ओर लौटना होगा। अपनी जीवनशैली को प्राकृतिक बनाना होगा। हमें अपने निरंकुश उपभोग पर अंकुश लगाना होगा। हमें अनिवार्यतः अपरिग्रह का पालन करना होगा। अपरिग्रह अर्थात् आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का संग्रह व उपयोग न करना आध्यात्मिक उन्नति का महत्त्वपूर्ण तत्त्व रहा है लेकिन आज यही अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए अनिवार्य हो गया है।

सामूहिक अथवा दूसरों की संपत्ति का विनाश करके हम स्वयं नष्ट होते जा रहे हैं

श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त

नरसिंह मेहता

सुश्री इंदु सिंह 'इंदुश्री'
स्वतंत्र लेखन
नरसिंहपुर, मध्य प्रदेश

भारत भूमि कभी संतों व भक्तों से विहीन नहीं रही कोई भी काल या समय रहा हो जब–जब धर्म का पतन होने लगा और आमजन सत्संग से दूर होने लगा तब–तब किसी देवात्मा ने अवतार लेकर समाज को दिशा देने व भगवद्भक्ति की तरफ मोड़ने का काम किया है । ऐसा ही आज से लगभग 600 साल पूर्व हुआ जब श्रीकृष्ण की परम पावन नगरी द्वारिका के उद्गम स्थल जिसे वर्तमान में गुजरात के नाम से जाना जाता वहां के जूनागढ़ ग्राम में एक प्रतिष्ठित ब्राम्हण परिवार में नरसिंह मेहता का जन्म हुआ। पिता कृष्ण दामोदरदास तथा माता लक्ष्मी गौरी अपने इस पुत्र के साथ लम्बे समय तक नहीं रह पाए और उनके बाल्यकाल में ही उन्हें अपनी दादी जयकुंवरि व बड़े भाई वंशीधर को सौंपकर असमय ही परमधाम को चले गए। नरसिंह मेहता जो कालान्तर में सौराष्ट्र के सबसे बड़े भजन गाने वाले बने अपने बचपन में उनका कंठ खुल नहीं पाया जिसकी वजह से वे लगभग आठ वर्ष की आयु तक गूंगे के समान रहे । उनकी यह दशा देखकर उनकी दादी को उनकी बेहद चिंता लगी रहती और वे भगवान से प्रार्थना करती रहती कि वे उनके पोते को वाणी प्रदान करे जिससे कि उसे अपना जीवन दूसरों पर आश्रित रहकर न व्यतीत करना पड़े । यही नहीं वे साधु–संतों के पास जाकर भी अपने पोते की इस शारीरिक व्याधि के लिए उपाय पूछती व उसे दूर करने का वर मांगती रहती इसी प्रयास में एक दिन एक महात्मा उन्हें मिले जिनकी कृपा से उन्होंने पहली बार अपने मुख से राधेकृष्ण का उच्चारण किया। उन सिद्ध संत ने राधेकृष्ण का महामंत्र उनके कानों में क्या फूंका उनका मानो जीवन ही बदल गया अब तक जो सब कुछ अनिश्चित व मुश्किल था वो प्रभु नाम से एकदम सुनियोजित व सहज हो गया उन्हें जीवन का वास्तविक अर्थ ज्ञात हो गया जीने की वो वजह मिल गयी जिसकी उन्हें तलाश थी। उन्होंने भगवान श्रीकृष्ण की सेवा व भक्ति को अपने जीवन का ध्येय बना लिया और दिन–रात उनके नाम का जप करने लगे उनके ही ध्यान में लीन रहने लगे। परिवार व समाज के बीच रहकर ईश्वभक्ति करना इतना आसान नहीं

उस पर सारा समय केवल एक ही काम अड़चन तो आनी ही है तो उनके साथ भी ऐसा हुआ। परमात्मा भी मानो उनकी परीक्षा लेना चाहते हो कि उनकी निर्मल भक्ति की जांच कर ली जाए यह मात्र दिखावा या ढोंग तो नहीं इसलिए उनके जीवन में कई पड़ाव आये जब उन्हें अपमानित व लज्जित होना पड़ा मगर, उन्होंने किसी भी परिस्थिति में भगवान की कृपा पर संदेह नहीं किया उन्हें दोष नहीं दिया बल्कि, इन सब मुश्किलों को कसौटी मानकर स्वीकार किया। दादी की मृत्यु के बाद उनसे निः स्वार्थ प्रेम करने वाला कोई न रहा हालांकि, उनके बडे भाई वंशीधर उनका पालन करते मगर, उनकी भाभी दुरितगौरी को उनका काम न करना फूटी आंख न सुहाता था। वह अक्सर उन्हें इस बात का उलाहना देती व उनकी शादी मनिकगौरी से हो जानेके बाद तो दोनों पति–पत्नी उन्हें खटकने लगे और वह उन्हें जली–कटी सुनाने का कोई अवसर हाथ से जाने न देती थी। आये दिन भाभी से उन्हें निठल्ले और भाई पर बोझ होने के लिये ताने सुनने मिलते परन्तु भाई के स्नेह व कृष्ण की भक्ति के कारण वह चुपचाप सब सहते रहते थे। एक दिन मगर, बात बहुत ज्यादा ही बढ गई भाभी ने उन्हें जी भरकर कोसा और घर छोड़कर जाने को कह दिया क्योंकि, उन्हें लगता था कि वह व उनका परिवार उनके पति के कमाए पैसों पर जबरन लदा हुआ है। भाभी की बात सुनकर नरसिंह मेहता को बहुत दुख हुआ और इस अपमान को वह सह नहीं पाए और घर छोड़कर चले गए परन्तु, जो घटना उन्हें उस समय तकलीफदायक प्रतीत हो रही थी वही आगे चलकर उनके सौभाग्य उत्कर्ष का आधार बनी।

अपनी मां समान भाभी दुरितगौरी द्वारा बुरी तरह से कटु वचन कहकर निकाने जाने से आहत होकर नरसिंह मेहता को एक क्षण समझ न आया कि अब वे क्या करें और कहाँ जाएं मगर, विधाता ने तो सब कुछ पहले ही लिखकर रखा था। उसी के अनुसार उनके जीवन का नया अध्याय शुरू होने जा रहा था जो उन्हें साधारण से असाधारण और सामान्य जब से भक्ति शिरोमणि में बदलने वाला था। घर से निकाले जाने के पश्चात वे पास ही के एक शिव मंदिर में रहने चले गए और सात दिनों तक लगातार एकनिष्ठ भाव से शिवलिंग की तपस्या में लीन रहे। उनकी अटूट श्रद्धा व आस्था को देखकर भोलेनाथ प्रसन्न हुए और साक्षात प्रकट होकर मनचाहा वरदान मांगने को कहा परन्तु, जिसका मन एक बार भगवान में रम गया वह उनकी भक्ति के सिवाय कोई अन्य कामना नहीं करता है। उन्होंने भी शिवजी से वही देने को कहा जो उन्हें सबसे अधिक प्रिय है तब उनकी बात सुनकर भगवान शिवजी ने उन्हें श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त होने का वर ही नहीं दिया बल्कि,अपने साथ उन्हें हरिधाम ले जाकर कृष्ण के दर्शन भी करवाये और उनका रास भी दिखाया जिसे देखकर वह अपने आपको भूलकर उसमें ही लीन हो गए। जब सुधि आई तो श्रीकृष्ण भगवान ने उन्हें वापस गृहस्थ समाज में जाकर अपने दायित्वों का निर्वहन करने और समस्त ऋणों से उऋण होने की बात कही जिसे सुनकर उन्होंने उनके चरण छोड़कर जाने से मना किया तो प्रभु ने उनको जीवन का वास्तविक अर्थ व मानव जन्म के दायित्वों का बोध कराया व उनके साथ रहने का वचन दिया। प्रभु का आश्वासन पाकर वे निश्चिंत होकर अपने घर वापस आये पर,भाभी ने पुनः उन पर कटाक्ष किये और

अपनी पत्नी व बच्चों सहित तुरन्त घर छोड़कर जाने को कह दिया। वे कृष्ण के विश्वास पर पत्नी व बच्चों को लेकर घर से निकल गए और रात एक धर्मशाला में व्यतीत की जहां उन्हें एक सेठजी मिले जिन्होंने उन्हें रहने को घर पूजा करने एक मंदिर बनवाकर दिया । इस तरह भाभी के कारण उनका जीवन जो अब तक भाई के सहारे चल रहा था अब प्रभु को पूर्ण रूप से समर्पित हुआ तो श्रीमद्भगवादगीता में कहे अपने वचन अनुसार उन्होंने अपने भक्त के योगक्षेम का वहन कर उन्हें सत्य साबित किया ।

नरसिंह मेहता के सम्पूर्ण जीवन में अनेक ऐसी घटनाओं का उल्लेख मिलता जिन्हें पढ़ व सुनकर उनकी भक्ति व विश्वास की पराकाष्ठा का ज्ञान होता जिसके बलबूते पर उन्होंने अपने परिवार ही नहीं संतों का भी पालन–पोषण किया और जीवन में आने वाली हर एक बाधा को सरलता से पार किया। उनके गाये भजन आज भी देश में दोहराए जाते जो यह बताते कि स्थूल रूप से न रहकर भी व्यक्ति अपने सत्कर्मों से सूक्ष्म रूप में अनंतकाल तक इस धरा पर रह सकता है । महात्मा गांधी भी आजीवन उनके रचित इस भजन को गाते रहे –

वैष्णव जन तो तेने कहिये,
जे पीड परायी जाणे रे।
पर दुःखे उपकार करे तो ये,
मन अभिमान न आणे रे

वाकई, जो भी उन्होंने लिखा वह उनका भोगा व अंतर से अनुभूत किया हुआ अनुभव है जिसके माध्यम से हम उनको समझ सकते हैं ।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

मेरी भोपाल यात्रा - एक संस्मरण

मनमोहन कालरा

निदेशक
विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग
नई दिल्ली, भारत सरकार

मानव जीवन की तीन मूलभूत आवश्यकताएँ हैं – रोटी, कपड़ा और मकान। इनको पाने के लिए धन अर्जित करना पड़ता है। हर आदमी को धन कमाने के लिए संघर्ष करना होता है। कोई ना कोई व्यवसाय या फिर नौकरी। नौकरी के लिए शिक्षा और डिग्री अर्जित करनी होती है। पशु–पक्षियों की सब आवश्यकताऐं ईश्वर स्वयं ही पूरी कर देते हैं। उनके पास नैसर्गिक ज्ञान भी होता है। भोजन उन्हें प्रकृति से मिल जाता है। मनुष्य के लिए उपयोगी पशु–पक्षी उसके संरक्षण में रहते हैं।

मेरी पिछली दो पीढ़ियों में नौकरी पेशा लोग ही रहे हैं। मेरे दादा जी बैंक मैनेजर थे और मेरे पिताजी रेलवे इंसपैक्टर। वंशानुगत और पैत्रिक धरोहर कारणों से मुझमें भी नौकरी करने की ललक थी। मैंने इसके लिए कई प्रतियोगी परीक्षाऐं उत्तीर्ण कीं। मुझे 1964 में आकाशवाणी, भोपाल में 'यांत्रिकी सहायक' की नौकरी मिल गई। यह मेरी पहली सरकारी नौकरी थी। मैं खुश भी बहुत था कि मुझे सरकारी नौकरी मिल गई लेकिन परिवार से दूर जाने की उदासी भी थी।उन दिनों हम भुसावल रहते थे। यहीं मेरा जन्म भी हुआ था।

भारी मन से मैंने अपने जन्मस्थली और अपने घर से दूर जाने की तैयारी शुरू कर दी। कोई और चारा ना था। धनाभाव और अनुभव–विहीन होने के कारण अपने शहर में कोई व्यवसाय भी तो नहीं जमा सकता था। मैंने अपने सामान, कपड़े और कागज़ात आदि और कुछ जरूरी सामान, बर्त्तन और खाने का सामान रखा। निर्धारित तिथि 24–08–1964 को मैंने अपने परिवार – माँ, बाप, छोटे बहन और भाई से विदा ली। मैं पहली बार अपनों से अब अलग हो रहा था। संतप्त मन और बोझिल कदमों से भुसावल स्टेशन की ओर चल पड़ा। रेलवे स्टेशन पर बहुत भीड़ थी और यात्रियों का बुरा हाल था। सारे डिब्बे खचाखच भरे हुए थे। मैं किसी तरह थर्ड क्लास के एक डिब्बे में घुसने में सफल हो गया। मुझे खड़े होने की जगह मिल गई। उन दिनों दिन की यात्रा के लिए आरक्षण नहीं होता था। पंजाब और हरियाणा के कुछ व्यापारी अपनी गायें महाराष्ट्र और गुजरात में बेचकर लौट रहे थे। उनके तसलों से डिब्बा पूरी तरह से भरा था। एक व्यापारी को मेरी दुर्दशा देखकर दया आ गई। उसने दो सीटों के बीच तसलों को एक दूसरे पर रखकर व्यवस्थित कर उन पर रद्दी बिछा दी। आसन जैसा बन गया था। मुझे उस पर बिठा दिया। यह एक अलग ही तरह का अनुभव

था। आखिरकार हिचकोले खाते हुए 9 घंटे के लम्बे सफर के बाद शाम 4 बजे मैं भोपाल पहुँच गया। मैं अपना सामान ले कर दरवाजे पर पहुँचा लेकिन चढ़ने वाले यात्रियों में तो मल्ल युद्ध चल रहा था। वे किसी को उतरने ही नहीं दे रहे थे। मेरी उतरने में सहायता दो छात्रों ने की और उन्होंने मुझे तांगा–स्टेण्ड तक छोड़ दिया। वहाँ एक अजीब माहौल था। तांगे वाले अपने घोड़ों को चाबुक नहीं मारते थे। वे भोपाली गालियाँ दे रहे थे जिसे सुनकर घोड़े चल पड़ते। ये गालियाँ तब सिर्फ भोपाल में प्रचलित थीं। फिर धीरे–धीरे पूरे देश में प्रचलित हो गई, विशेषकर युवा वर्ग में। भोपाल में तब केवल तांगे ही चलते थे। तब तक भारत में थ्री व्हीलर नहीं आये थे। मैं एक तांगे में बैठा। उसने मुझे Grand Hotel छोड़ दिया।

इस होटल में सभी साधारण सुविधाऐं उपलब्ध थीं। किराया 3 रुपये प्रतिदिन था। मैं अपने कमरे में गया और घर परिवार को याद करके खूब रोया। उस समय घरों में फोन नहीं थे। परिवार वालों से किसी प्रकार का संपर्क नहीं हो सकता था। होटल के हम उम्र सेवक गंगाराम ने मेरी हिम्मत बढ़ाई। उसने मुझे चाय पिलाई और एक चुटकुला सुनाकर मुझे हँसा दिया। फिर वह चला गया। उसके बाद वह मेरा ख्याल भाई की तरह रखने लगा। मैं उस होटल में एक महीना रहा। उसके बाद एक सरकारी कर्मचारी के यहाँ एक कमरा लेकर रहने लगा। किराया 50 रुपये महीना था। उसकी एक शर्त थी कि रात 10 बजे से सुबह 6 बजे तक बाथरूम आदि का उपयोग वर्जित था क्योंकि उसकी बेटियाँ मेरे कमरे के बाहर बरामदे में रात में सोया करती थी। वहाँ से भी तीन महीने बाद मैं एक कमरे के प्राइवेट मकान में शिफ्ट कर गया। इस तरह यह कमरा बदलने का सिलसिला चलता रहा।

जून 1965 में भोपाल में आखिरी बदलाव में मैंने एक कमरा और रसोई का सैट सिंधी कालोनी में मंगतराम जी के मकान में लिया। मंगतराम जी की अनाज की दुकान थी। वह शालीन, सुसंस्कृत एवं धार्मिक प्रवृत्ति के इंसान थे। वह मददगार थे। उनके मकान में एक छोटा सा गुरुद्वारा भी था जहाँ रोज़ सुबह गुरबाणी का पाठ होता था। कुछ दिनों के बाद मेरे परिवार के लोग मुसावल से भोपाल आ गये थे। मेरी बहन इंदिरा ने एम.ए. (अंग्रेजी साहित्य) में हमीदिया कॉलेज में दाखिला ले लिया। हमें स्थापित करके मेरे माता–पिता एवं भाई भुसावल वापिस चले गए थे। इंदिरा बहन के आने से मुझे राहत मिली। घर का बना खाना और चाय–पानी मिलने लगा। होटल का गरिष्ठ खाना बंद हो गया था। सेहत में सुधार हुआ।

आकाशवाणी में ड्यूटी रात–दिन की पाली में होती थी। एक पाली 9–10 घंटे की होती थी। कभी–कभी दो पाली की ड्यूटी भी एक साथ हो जाती थी। हफ्ते में मात्र एक दिन का अवकाश मिलता था और कोई छुट्टी नहीं, ओवर टाइम भी नहीं। आकाशवाणी की सेवा आपातकालीन और जरूरी सेवाओं में आती थी। बीमार होने पर भी ड्यूटी पर जाना पड़ता था। ड्यूटी पर जाकर ही किसी प्रकार की राहत मिल पाती थी। रात में बीमार होने पर किसी उच्च– अधिकारी को छुट्टी के लिए भी प्रार्थना नहीं कर सकते थे। फोन की सेवा भी बहुत सीमित थी। इस संदर्भ में मुझे 11 जनवरी, 1966 की सुबह की याद आ रही है। उस सुबह कड़ाके की ठंड थी। मूसलाधार बारिश हो रही थी। मुझे 104 डिग्री बुखार था और मैं थर–थर काँप रहा थ। सुबह 4 बजे मेरे कमरे के कुंडे को किसी ने खटकाया। बाहर निकला तो आकाशवाणी के ड्राईवर ने मुझे बतलाया कि भारत के प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री का ताशकंद में दुखःद निधन हो गया है। उनके शोक में सुबह 6 बजे से शोक–गीतों और भजनों का विशेष प्रसारण होगा। मेरी प्रसारण केन्द्र में ड्यूटी लगी है। मैं फटाफट तैयार हुआ और शहर से 20 किलोमीटर दूर जंगल में स्थित प्रसारण केन्द्र पहुँच गया। वहाँ एक कप चाय भी उपलब्ध नहीं होती थी। 10 बजे जब शहर स्थित आकाशवाणी का मुख्य केन्द्र खुला तो मुझे राहत मिली और मेरी जगह दूसरा कर्मचारी भेज दिया गया। मैं घर वापिस आया। उसके बाद ठीक होने में मुझे 3–4 दिन लग गये। आकाशवाणी का प्रसारण किसी भी कारण से रुक नहीं सकता। तब की मेरी दिनचर्या काफी कठिन थी। मुझे लगा कि ऐसी दिनचर्या सेवानिवृत्ति तक नहीं चल सकती इसलिए मैंने नौकरी बदलने की सोची और संघ लोक सेवा आयोग की प्रतियोगी परीक्षा के लिए तैयारी शुरू कर दी।

आकाशवाणी में रहते हुए मैंने संघ लोक सेवा आयोग का सहायक अनुभाग अधिकारी के लिए प्रतियोगी परीक्षा का आवेदन दिया। इसमें हज़ारों की तादाद में प्रतियोगी भाग लेते हैं। सौभाग्य से मैं इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया और मेरी इसमें नौवीं रैंक आयी थी। मेरी केन्द्रीय सचिवालय सेवा में शिक्षा मंत्रालय में नियुक्ति हो गई। 5 वर्षों के बाद मैंने अनुभाग अधिकारी की परीक्षा भी अच्छे अंकों से उत्तीर्ण कर ली। अनुभाग अधिकारी के बाद मैं डेस्क अधिकारी, अवर सचिव (पर्यावरण और वन मंत्रालय), उप– सचिव और निदेशक (विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग) बना। सितम्बर 2002 में मैं सेवानिवृत्त हो गया। सरकारी नौकरी के 36 वर्ष का लंबा सफर अंततः निर्विघ्न समाप्त हुआ। ऐसा लगता है जैसे कल की ही बात थी।

खूब लड़ी मर्दानी, वो तो झांसी वाली रानी थी

कालिका प्रसाद सेमवाल
उत्तराखंड

भारतीय वसुंधरा को गौरवान्वित करने वाली झांसी की रानी वीरांगना लक्ष्मीबाई वास्तविक अर्थ में आदर्श वीरांगना थीं। सच्चा वीर कभी आपत्तियों से नहीं घबराता है। प्रलोभन उसे कर्तव्य पालन से विमुख नहीं कर सकते। उसका लक्ष्य उदार और उच्च होता है। उसका चरित्र अनुकरणीय होता है। अपने पवित्र उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वह सदैव धर्मनिष्ठ, आत्म विश्वासी, कर्तव्य परायण और स्वाभिमानी होता है। ऐसी ही थीं वीरांगना लक्ष्मीबाई।

महारानी लक्ष्मीबाई का जन्म काशी में 19 नवंबर सन् 1835 को हुआ। इनके पिता मोरोपंत ताम्बे चिकनाजी अप्पा के आश्रित थे। इन की माता का नाम भागीरथी बाई था। महारानी के पितामह बलवंत राव के बाजीराव पेशवा की सेना में सेनानायक होने के कारण मोरोपंत पर भी पेशवा की कृपा रहने लगी। लक्ष्मी बाई अपने बाल्यकाल में मनुबाई के नाम से जानी जाती थीं। इधर सन् 1838 में गंगाधरराव को झांसी का राजा घोषित किया गया। वे विधुर थे। सन् 1850 में मनुबाई से उनका विवाह हुआ। सन् 1851 में उन को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। झांसी के कोने–कोने में आनंद की लहर प्रवाहित हुई, लेकिन चार माह पश्चात उस बालक का निधन हो गया। सारी झांसी शोक सागर में निमग्न हो गई। राजा गंगाधर राव को तो इतना गहरा धक्का पहुंचा कि वे फिर स्वस्थ न हो सके और 21 नवम्बर 1,853 को चल बसे।

यद्यपि महाराजा का निधन महारानी के लिए असहनीय था, लेकिन फिर भी वे घबराई नहीं, उन्होंने विवेक नहीं खोया। राजा गंगाधर राव ने अपने जीवनकाल में ही अपने परिवार के बालक दामोदर राव को दत्तक पुत्र मानकर अंग्रेजी सरकार को सूचना दे दी थी। परन्तु ईस्ट इंडिया कंपनी की सरकार ने दत्तक पुत्र को अस्वीकार कर दिया।

27 फरवरी 1854 को लार्ड डलहौजी ने गोद की नीति के अंतर्गत दत्तक पुत्र दामोदर राव की गोद अस्वीकृत कर दी और झांसी को अंग्रेजी राज्य में मिलाने की घोषणा कर दी। पोलेटिकल एजेंट की सूचना पाते ही रानी के मुख से यह वाक्य प्रस्फुटित हो गया, 'मैं अपनी झांसी नहीं दूंगी।' 7 मार्च 1854 को झांसी पर अंग्रेजों का अधिकार हुआ। झांसी की रानी ने पेंशन अस्वीकृत कर दी व नगर के राज महल में निवास करने लगीं।

यहीं से भारत की प्रथम स्वाधीनता क्रांति का बीज प्रस्फुटित हुआ। अंग्रेजों की राज्य लिप्सा की नीति से उत्तरी भारत के नवाब और राजे-महाराजे असंतुष्ट हो गए और सभी में विद्रोह की आग भभक उठी। रानी लक्ष्मीबाई ने इसको स्वर्ण अवसर माना और क्रांति की ज्वालाओं को अधिक सुलगाया तथा अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह करने की योजना बनाई।

भारत की जनता में विद्रोह की ज्वाला भभक गई। समस्त देश में सुसंगठित और सुदृढ रूप से क्रांति को कार्यान्वित करने की तिथि 31 मई सन् 1857 निश्चित की गई, लेकिन इससे पूर्व ही क्रांति की ज्वाला प्रज्ज्वलित हो गई और 7 मई 1857 को मेरठ में तथा 4 जून सन् 1857 को कानपुर में, भीषण विप्लव हो गए। कानपुर तो 28 जून सन् 1857 को पूर्ण स्वतंत्र हो गया। अंग्रेजों के कमांडर सर ह्यूरोज ने अपनी सेना को सुसंगठित कर विद्रोह दबाने का प्रयत्न किया। उन्होंने सागर,गढ़कोटा,शाहगढ़, मदनपुर, मडखेड़ा, वानपुर और तालबेहट पर अधिकार किया और नृशंसतापूर्ण अत्याचार किए। फिर झांसी की ओर अपना कदम बढ़ाया और अपना मोर्चा कैमासन पहाड़ी के मैदान में पूर्व और दक्षिण के मध्य लगा लिया।

लक्ष्मीबाई पहले से ही सतर्क थीं और वानपुर के राजा मर्दनसिंह से भी इस युद्ध की सूचना तथा उन के आगमन की सूचना प्राप्त हो चुकी थी। 23 मार्च सन् 1858 को झांसी का ऐतिहासिक युद्ध आरंभ हुआ। कुशल तोपची गुलाम गौस खां ने झांसी की रानी के आदेशानुसार तोपों के लक्ष्य साधकर ऐसे गोले फेंके कि पहली बार में ही अंग्रेजी सेना के छक्के छूट गए। रानी लक्ष्मी बाई ने सात दिन तक वीरतापूर्वक झांसी की सुरक्षा की और अपनी छोटी-सी सशस्त्र सेना से अंग्रेजों का बड़ी बहादुरी से मुकाबला किया। रानी ने खुलेरूप से शत्रु का सामना किया और युद्ध में अपनी वीरता का परिचय दिया। वे अकेले ही अपनी पीठ के पीछे दामोदर राव को कसकर घोड़े पर सवार हो, अंग्रेजों से युद्ध करती रहीं। बहुत दिन तक युद्ध का क्रम इस प्रकार चलना असंभव था। सरदारों का आग्रह मानकर रानी ने कालपी प्रस्थान किया। वहां जाकर वे शांत नहीं बैठीं। उन्होंने नानासाहब और उनके योग्य सेनापति तात्या टोपे से सम्पर्क स्थापित किया और विचार-विमर्श किया। रानी की वीरता और साहस का लोहा अंग्रेज मान गए, लेकिन उन्होंने रानी का पीछा किया। रानी का घोड़ा बुरी तरह घायल हो गया और अन्त में वीरगति को प्राप्त हुआ,लेकिन रानी ने साहस नहीं छोड़ा और शौर्य का प्रदर्शन किया।

कालपी में महारानी और तात्या टोपे ने योजना बनाई और अंत में नाना साहब, शाहगढ़ के राजा,वानपुर के राजा मर्दनसिंह आदि सभी ने रानी का साथ दिया। रानी ने ग्वालियर पर आक्रमण किया और वहां के किले पर अधिकार कर लिया। विजयोल्लास का उत्सव कई दिनों तक चलता रहा लेकिन रानी इसके विरुद्ध थीं। यह समय विजय का नहीं था, अपनी शक्ति को सुसंगठित कर अगला कदम बढ़ाने का था।

इधर सेनापति सर ह्यूरोज अपनी सेना के साथ संपूर्ण शक्ति से रानी का पीछा करता रहा और आखिरकार वह दिन भी आ गया जब उसने ग्वालियर का किला घमासान युद्ध करके अपने कब्जे में ले लिया। रानी लक्ष्मीबाई इस युद्ध में भी अपनी कुशलता का परिचय देती रहीं। 18 जून 1858 को ग्वालियर का अन्तिम युद्ध हुआ और रानी ने अपनी सेना का कुशल नेतृत्व किया। वे घायल हो गई और अंततः उन्होंने वीरगति प्राप्त की।

महारानी लक्ष्मीबाई की जयन्ती पर उन्हें सत् सत् बार प्रणाम करता हूँ।

'श्रीमद्भगवद्गीता प्रभु वाणी है। गीता सर्वधर्मसमन्वयकारी है। हिंदू धर्म में जो कुछ भी है, उसका सारमर्म गीता में ही है। किसी व्यक्ति की कैसी भी रुचि, बुद्धि और प्रकृति हो एवं उसे किसी भी प्रकार की शिक्षा-दीक्षा प्राप्त हो, गीता सभी के लिए उपयोगी है। गीता के उपदेशों का अनुवर्तन करके साधक मात्र ही परमार्थ के पथ पर अर्थात मानव-जीवन के चरम लक्ष्य के पथ पर निर्भय अग्रसर हो सकता है। गीता जिस प्रकार गृहस्थ के लिए अनुकूल पद का प्रदर्शन करती है, एक सन्यासी के लिए भी उसी प्रकार करती है। यह असांप्रदायिक विश्वजनीन शास्त्र प्रत्येक व्यक्ति को उसके स्वभावोचित मार्ग पर परम कल्याण प्राप्ति के लिए उत्साहित और सहायक है। सभी मनुष्यों के जीवन को चरम सार्थकता में प्रतिष्ठित करने के लिए एक गीता ही पर्याप्त है।'

-योगी शिवनंदन नाथ

बुढ़ापा

विकास सूर्यकांत वाघमारे
शोधार्थी
औरंगाबाद, महाराष्ट्र

बहुत वर्षों बाद मैं अपने गाँव आया था। गाँव वैसे का वैसा ही था। वही सड़के वही मकान। आज सुबह मैं थोड़ा देर से उठा क्योंकि सफर से थक गया था। उठकर मैं नहाने चला गया। तब तक माँ मेरे लिए चाय और नाश्ता लेकर आई। मैंने नाश्ता किया, चाय पी । फिर मैं गाँव की सैर करने के लिए घर से बाहर निकला। बाहर निकलते ही मुझे गोपू चाचा का घर दिखाई दिया। मैंने सोचा चलो सबसे पहले गोपू चाचा से ही मिल लेते हैं। गोपू चाचा का परिवार मेरे लिए बहुत आत्मीयता पूर्ण था। गोपू चाचा का पूरा नाम गोपालराव धायगुडे। लेकिन सब लोग उन्हें गोपू चाचा के नाम से पहचानते थे। मैंने गोपू चाचा के घर में झांक कर देखा तो वह चाय पीते नजर आए। अकेले ही थे। मैं अंदर चला गया। मुझे देखकर उन्हें बहुत खुशी हुई। मुझे भी उन्हें देखकर आनंद हुआ। मेरी तरफ देखकर उन्होंने कहा विनय शहर से कब आया? कैसा है तू? मैं अच्छा हूं...। आप कैसे हैं गोपू चाचा? मैं भी अच्छा हूं...। ड्यूटी कैसे शुरू है आपकी?

ड्यूटी का क्या है बेटा... कौन सी ऐसी बड़े पगार की नौकरी थी। नगर पालिका में साफ– सफाई करने वाला कर्मचारी तो था। लेकिन अब तीन साल हुए मुझे रिटायर होकर। अब बस थोड़ी सी पेंशन मिलती है, उसी के आधार पर जीवन जी रहा हूँ। उस पल मुझे गोपू चाचा के आंखों में उदासी और अकेलापन दिखाई दिया। उसके तुरंत चाचा ने मुझे पूछा... तेरी पढ़ाई कहाँ तक आयी है? पूरी हुई या नहीं?

हां, चाचा...मेरी पढ़ाई हो चुकी है। अच्छे नंबर से उपाधि भी हासिल की है। अब जॉब की तलाश में हूं। लेकिन आज के समय में जॉब मिलना बहुत कठिन हो चुका है। जॉब के लिए आज अच्छे अंकों के बजाय सिफारिश और पैसा लगता है। बात तो सही है विनय। आज

नौकरी पाने के लिए पैसा और सिफारिश लगती ही है। कमला मौसी कहीं दिखाई नहीं दे रही...कहाँ है वह? क्या बताऊं तुझे विनय.. .. क्या हुआ...? क्या बात है चाचा...। तेरी कमला मौसी चार वर्ष पहले ही ईश्वर को प्यारी हो गई। माफ कीजिए मुझे... मैं यह बात नहीं जानता था। सुनकर बहुत दुख हुआ। कमला मौसी मुझे बहुत प्रेम करती थी। उसकी मृत्यु की बात सुनकर मैं भाव-विभोर हो गया था। लेकिन यह सब कैसे हुआ...?

कब हुआ... कैसे हुआ... यह पूछ मत। ईश्वर की यही इच्छा थी। आप की लाड़ली प्रेरणा और रवि दादा कहीं दिखाई नहीं दे रहे। तेरा रवि दादा शहर में है। अपने दो बेटे और पत्नी के साथ वही रहता है। और प्रेरणा...? कहाँ है वह...? बहुत प्यार से पाला है आपने उसे। हमारे गाँव से अकेली लड़की थी जो शहर में पढ़ाई के लिए गई थी। बेटे की तरह उसे पाला है आपने। कभी किसी चीज की कमी महसूस नहीं होने दी। हम जब स्कूल में थे तब कहीं बार मेरे पास जो चीजें नहीं होती थी, मैं उससे मांग लेता था। मुझे आज भी याद है उसे स्कूल में पैदल जाना पड़ता था इसलिए आपने खुद की आवश्यकताओं को मारकर उसे एक साइकिल खरीद कर दी थी। उससे मिलकर भी बहुत दिन हो गए। जब से कॉलेज छोड़ा है तब से उससे बात भी नहीं हो पाई। कहाँ है वह...? शादी हो गई उसकी। क्या...! कब... बताया भी नहीं।

तीन साल हो गए। वह पति के साथ शहर में रहती है। कश्वलेज पर नौकरी करती है। वहां उसे अच्छी खासी तनख्वाह मिलती है। रवि दादा और प्रेरणा बीच-बीच में आपसे मिलने आते होंगे न... मेरी यह बात सुनकर वह कुछ बोल नहीं पाए। निःशब्द हो गए थे। शायद अंदर ही अंदर कुछ सोच रहे थे। इसी सोच विचार में अचानक से उन्हें पसीना आना शुरू हुआ। धड़कनें तेज हो रही थी। इसी हालत में वह जमीन पर गिर पड़े। मैंने उठाने की बहुत कोशिश की लेकिन मैं अकेला उन्हें उठा नहीं पा रहा था। मैं घबरा गया, क्या करूं कुछ समझ नहीं आ रहा था। आसपास में रहने वाले लोगों को बुलाया, वैसे ही स्थिति में गोपू चाचा को ऑटो में बिठाकर अस्पताल लाया। गोपू चाचा की तबीयत सीरियस हो रही थी। पूरा शरीर ठंड़ा हो गया था। कुछ ही समय में ऑटो अस्पताल के सामने आ खड़ा हुआ। गोपू चाचा को बाहर निकालकर व्हील चेयर पर बिठाया। उनकी तबीयत देखकर उन्हें सीधे आईसीयू में भर्ती कर दिया गया।

गोपू चाचा को क्या हो रहा है मैं समझ नहीं पा रहा था। लेकिन उनका शरीर बहुत तड़पता हुआ दिखाई दे रहा था। डॉक्टर भी उस समय अस्पताल में नहीं थे। वार्डन ने उन्हें फोन करके बुलाया। कुछ ही समय में डॉक्टर वहां पर आए। उन्होंने आते ही इलाज करना शुरू कर दिया। शरीर में जगह, जगह इंजेक्शन लगवा दिए। अलग-अलग मशीन लगवाई। गोपू चाचा को होश नहीं था। उनका शरीर बर्फ के ढेले जैसा हो गया था। केवल सांस चल रही थी। वह भी तेजी के साथ। पूरा शरीर और अचेतन हो गया था। मुंह में से थोड़ा-थोड़ा खून बाहर आ रहा था। हाथ पैर मोड़ने लगे थे। उन्हें सीधा करने की कोशिश असफल हो रही थी।

अस्पताल के बाहर बहुत से लोग इकट्ठा हुए थे। गोपू चाचा की बेटी प्रेरणा भी उसमें थी। उसने रो-रो कर अपना बुरा हाल कर लिया था। कुछ औरतें उसे समझा रही थी। लोग आपस में चर्चा कर रहे थे। गोपू चाचा को अस्पताल में भर्ती तो कर दिया लेकिन अब पैसे कौन भरेगा? गोपू चाचा के बेटे रवि को खबर दी थी, पर वह भी अब तक नहीं आया था। इधर गोपू चाचा की तबीयत ओर अधिक सीरिअस हो रही थी। नाक और मुंह से बड़े पैमाने पर खून आना शुरू हुआ था। शरीर के किसी भी भाग से बाहर निकलने का प्रयास मानो खून की धाराएं कर रही थी। डॉक्टर ने उनके मुंह और नाक में नलियाँ डाल दी। उसके जरिए शरीर में जमा हुआ खून बाहर निकाला जा रहा था। डॉक्टर ने स्पष्ट रूप से कहा कि ब्लड प्रेशर बहुत हाय हो गया है, जिस कारण खून वाहिकाएं फट गई है। जितना हो सके उतना प्रयास हम करेंगे। इतना कहकर वह उनका काम करने लगे।

गोपू चाचा को भर्ती कर के दो-तीन घंटे हो चुके थे। सब लोग अपने, अपने घर चले गए। अस्पताल में मैं, प्रेरणा और उसका बेटा रहे थे। डॉक्टर पूरी जिम्मेदारी के साथ अपना काम कर रहे थे। लेकिन उनका प्रयास असफल रहा। ईश्वर के मन में कुछ और ही था। रात के करीब दो बजे थे। डॉक्टर ने हमसे कहाँ... हमने पूरी तरह से प्रयास किया। लेकिन... डॉक्टर के इन शब्दों से लग रहा था कि गोपू चाचा चल बसे...। इस बात को सुनते ही प्रेरणा जोर -जोर से रोने लगी। रोते हुए वह कुछ तो बोल रही थी। उसकी बातों से ऐसा लग रहा था कि वह इससे पहले गोपू चाचा से मिलने कभी भी नहीं आयी थी। ऐसा लग रहा था कि वह आज खुद को अनाथ महसूस कर रही है। उसकी आंखों से जो आंसू बह रहे थे, वह बहुत कुछ बया कर रहे थे। रात भर उसकी नयन धाराएं रुक नहीं पाई थी। उसकी यह हालत देख कर मैं भी भाव विभोर हो गया था। एक तरफ गोपी चाचा का मृत शरीर था जो पूरी यातानाओं से परे जा चुका था तो दूसरी और प्रेरणा... जिसे संभालना मेरे लिए कठिन था। जैसे वैसे रात बीत गई। सुबह-सुबह गाँव वालों ने पैसे जमा करके अस्पताल का बिल भर दिया और गोपू चाचा के मृत शरीर को ले लिया। चाचा का बेटा रवि अपने बाप का अंतिम दर्शन भी लेने नहीं आया, जबकि पिता को मुखाग्नि देने का काम केवल बेटे का ही होता है। इस पूरी घटना को देखकर मैं अस्वस्थ हो गया था। इस घटना ने मुझे गहरी सोच में डूबा दिया। क्या कर रहे हैं हम? जिस माँ-बाप ने हमें पढ़ाया- लिखाया इस काबिल बनाया कि दुनिया के साथ हम चल सके। लेकिन दुनिया के साथ चलते-चलते इतने दूर हम चले जाते हैं कि वापस आने की इच्छा तक नहीं होती। हम अपने अभिभावकों को भूल जाते हैं। जिन्होंने हमें समय की कीमत करनी सिखाई उन्हें ही समय नहीं देते। पैसों के पीछे इतने भागते हैं कि अपने माँ-बाप किस हाल में जी रहे हैं यह जानना भी महत्वपूर्ण नहीं समझते। इन सब बातों ने मेरे मन मैं उथल- पुथल मचा दी थी। कई प्रश्न मुझे अंदर ही अंदर खाए जा रहे थे। मेरा मन निःशब्द और अस्वस्थ हो गया था। ■

गरीबों का बादाम

मूंगफली

भूनी हुई मूंगफली बहुत ही स्वादिष्ट होती है। मूंगफली खाने से शरीर को शक्ति मिलती है। मूंगफली में रहने वाले पोषक तत्वों के कारण ही मूंगफली को गरीबों का बादाम कहा जाता है, दस्त, हृदय विकार, डायिबटीज और दस्त में मूंगफली के सेवन से लाभ होता है। मूंगफली के बीज शरीर को स्वस्थ रखते हैं। त्वचा विकार, किडनी और सर्दी–खांसी जैसी बीमारियों में मूंगफली खाने के फायदे यह एक ऐसी औषधि है जो आसानी से बाजार में मिल जाती है, मूंगफली की देश भर में कई प्रजातियां होती हैं। इसको देशी बादाम या चीनियां बादाम भी कहा जाता है। मूँगफली के तेल में पाए जाने वाले अनसेचुरेटेड वसीय अम्ल शरीर की लिपिड मात्रा और बश्वडी माँस इन्डेक्स द्धलम्बाई एवं वजन का अनुपातऋ को ठीक रखने में गुणकारी पाए गए हैं। मूंगफली का वानस्पतिक नाम ऐराकिस हाइपोजिया है और यह फैबेसी कुल से हैं।

हिंदी में–मूंगफली, विलायती मूंग, भोंयशीघ्र

इंग्लिश में–पी नट, ग्राउन्ड नट, चाईनीज ऑमन्ड मंकी नट

संस्कृत में–भूशिम्बी, भूमुद्ग, स्नेहबीजा, मंडपी

खांसी–सर्दी में मूंगफली को छीलकर उसकी भस्म बना लें। 1 ग्राम भस्म को शहद या गुनगुने जल के साथ सेवन करने से खांसी और सर्दी में लाभ होता है।

हृदय विकार में : मूंगफली तेल का इस्तेमाल करने से हृदय विकारों में लाभ होता है।

दस्त रोकने में : 1–2 बूँद मूंगफली बीज के तेल को पान में डालकर खाने से दस्त और पेट दर्द में लाभ होता है।

मूंगफली को भूनकर काली मिर्च, पुदीना, नींबू तथा अदरक के साथ मिला लें। इसकी चटनी बनाकर सेवन करने से पाचनतंत्र संबंधी विकार तथा पेट के रोगों में लाभ होता है।

डायबिटीज (मधुमेह) पर नियंत्रण : डायबिटीज (मधुमेह) के रोगियों को गेहूं के आटे और मूँगफली के आटे से बनी रोटी खाना चाहिए। इससे लाभ होता है।

किडनी विकार में : मूंगफली के तेल के इस्तेमाल से किडनी विकार तथा सूजन की समस्या में फायदा होता है।

डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)
संरक्षक शाकाहार परिषद्
भोपाल

जोड़ों के दर्द में : जोड़ों के दर्द से आराम पाने के लिए मूंगफली के तेल की मालिश करें। इससे जोड़ों का दर्द कम होता है।

त्वचा विकार में : मूंगफली तेल को लगाने से दाद, खुजली में लाभ मिलता है। मूंगफली को भूनकर चूर्ण बना लें। इसके उबटन को अन्य द्रव्यों के साथ मिला लें। इसे त्वचा पर लगाने से त्वचा संबंधित रोगों में लाभ होता है।

शारीरिक कमजोरी में : मूंगफली तेल का सेवन करने से शारीरिक कमजोरी दूर होती है, और शरीर को शक्ति मिलती है। सर्दी के मौसम में गुड़ में मूंगफली तथ तिल डालकर जो गुड़युक्त खाद्यपदार्थ तैयार किया जाता है, उसको खाने से शरीर को बहुत पौष्टिक मिलता है। मूंगफली, चना तथा मूंग को रात में भिगोकर सुबह नियमित सेवन करें। इससे शरीर की कमजोरी दूर होती है और शक्ति मिलती है। अधिक व्यायाम व शारीरिक मेहनत करने वाले लोगों के लिए यह उपाय बहुत लाभकारी है।

प्रयोग--- तेल– 1–2 बूँद

मूंगफली खाने से नुकसान : भूनी हुई मूंगफली के सेवन के तुरन्त बाद पानी नहीं पीना चाहिए। इससे परेशानी हो सकती है।

भीगी हुई मूंगफली खाने से स्वास्थ्य लाभ : विटामिन और मिनरल्स से भरपूर मूंगफली के कई स्वास्थ्य लाभ हैं। ये नट्स बीटा सिटोस्टेरॉल से भरपूर होते हैं, जो आपको कैंसर से सुरक्षित रख सकते हैं। इसमें आयरन, फोलेट, कैल्शियम और जिंक की भी अच्छी मात्रा होती हैं।

यूएसडीए द्वारा दी गई जानकारी के मुताबिक १०० ग्राम मूंगफली में ५६७ किलो कैलोरी,१६ ग्राम कार्बोहाइड्रेट ,९ ग्राम आहार फाइबर, ४ ग्राम चीनी, २६ ग्राम प्रोटीन, ४९ ग्राम कुल फैट होता है।

मूंगफली में कार्डियोप्रोटेक्टिव गुण होते हैं, जो आपको विभिन्न दिल संबंधी समस्याओं से सुरक्षित रखते हैं। मूंगफली का यह कार्डियोप्रोटेक्टिव गुण लंबे समय में दिल रोग के जोखिम को कम करने में मदद करता है और शरीर में खून परिसंचरण में भी सुधार करता है। कमर दर्द से परेशान हैं, तो मूंगफली को गुड़ के साथ भिगोकर खा सकते हैं। मूंगफली खाने से कमर दर्द से राहत मिल सकती है। मूंगफली बीटा–सिटोस्टेरॉल से भरपूर होती है, जो कैंसर के खतरे को काफी हद तक कम करता है। यह ट्यूमर, विशेष रूप से स्तन कैंसर के विकास को भी रोकता है। शोध के मुताबिक हफ्ते में तीन बार किसी भी रूप में मूंगफली खाने से कैंसर का खतरा 58 फिसदी तक कम हो जाता है। मूंगफली प्रोटीन, वसा और फाइबर का एक अच्छा मिश्रण है। इन पोषक तत्वों के कारण, मूंगफली मेटाबश्वलिज्म को बढ़ावा देती है और लंबे समय तक पेट को भरा रखती है। मूंगफली खाने से आपको भूख कम लगती है और आप खाना कम खाते हैं जिसकी वजह से वजन कम करने में मदद मिलती है। इन्हें सही मात्रा में खाने से आप फिट और स्वस्थ रहेंगे। इसका सेवन पुरुषों को बहुत फायदे देता है। नियमित रूप से इसके सेवन से इरेक्टाइल डिसफंक्शन (नपुंसकता) से जुड़ी समस्या को कुछ हद तक कम किया जा सकता है।

युगद्रष्टा तुलसी

डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक
अलकापुरी कुर्सी रोड
लखनऊ – 226022

आत्मज आत्माराम माता हुलसी के तुलसी ने,
रामरस; रसायन को पीया आठों याम है।

रामनाम लेते हुए लिया जन्म तुलसी ने,
'रामबोला' नाम वाला सन्त यह महान है।
पूज्यपाद नरहरि सनातन जी से काशी में ,
शास्त्रों में शिक्षित हो बढ़ाई कीर्तिमान है।

वेदों उपनिषदों के उनके मनन चिंतन में,
दिव्यभास भासित अलौकिक तत्त्वज्ञान है।
राम चरणों में लवलीन होकर तुलसी ने,
राघव आराधना की ज्योति को जलाई है।

मानस महाकाव्य के प्रणेता ज्ञानी तुलसी ने,
रामनाम गुण महिमा कोटि; कोटि गाई है।
महाकवि शिरोमणि रामदास बाबा तुलसी ने,
निगमागम वर्णित रामकथा को सुनाई है।

रामभक्ति शाखा के अनेक सन्त कवियों में,
तुलसी की दास्य भक्ति भावना अपूर्व है।
राम भक्त तपः पूत तुलसी की सर्जना में,
भक्ति ज्ञान कर्म की त्रिवेणी प्रवाहमान है।

लोक वेद रीति नीति साम्य अनुशासन में,
'मानस' में समाधान सूत्र विद्यमान है ।
युगद्रष्टा तुलसी के 'राम चरित मानस' में,
धार्मिक विषमता का समन्वय भासमान है।

अकेलापन

वाढेकर रामेश्वर महादेव
जिला सुरेन्द्रनगर, गुजरात

सुबह–सुबह मैं घूमने निकला,वातावरण का आनंद लेने। रास्ते के बगल में बड़ा पेड़ था, उसके नीचे कोई बैठा था। उसके रोने की आवाज आ रही थी। नजदीक जाकर देखा, तो वह मित्र कैलाश था। उसे समझाते हुए मैंने कहा–'कैलाश,खुद को संभाल,अब परिवार की जिम्मेदारी तुम पर है।' 'अब अन्ना मेरे साथ नहीं है, मैं जीकर क्या करू? बालू, मुझे नहीं जीना।' 'तुझे जीना पड़ेगा,माँ,भाई,बहन के लिए।' 'पिताजी का निधन,यह सदमा मैं भूल ही नहीं सकता।' कैलाश ने कहा। जितना दुख तुझे है,शायद उससे ज्यादा तुम्हारी माँ सावित्री को होगा। किंतु वह दुख भी व्यक्त नहीं कर सकती। क्योंकि वह सुन सकती है, बोल नहीं सकती। उसके दुख को तुझे समझना है। माँ का सहारा बनना है। हां, मैं अब माँ के लिए जीऊंगा। उसे अकेलापन कभी महसूस नहीं होने दूंगा। उसके साथ समय बिताऊंगा। 'कैलाश,एक बात पूछनी थी।' 'पूछ, बालू।' अन्ना का निधन हुआ,यह मुझे मालूम है। किंतु समाज में निधन के कई कारण बताए जा रहे हैं। सही कारण मुझे भी पता नहीं । वह मुझे जानना है। बालू भैया, मैं तुम्हें बड़ा भाई समझता हूँ। जो हुआ वह सच बताऊंगा। अन्ना का निधन शराब से हुआ । इतना ही नहीं तो अन्ना जुगार भी खेलते थे। माँ को मारते थे, गालियां देते थे। मैं देखकर, सुनकर अनदेखा करता था। समाज के कारण। कैलाश, तुम्हारी माँ सावित्री पहले से दुख सहती आई है शायद। बालू,अन्ना ने मुझे कई बार कहा था कि शादी मैंने सिर्फ जायदाद के लिए की थी। मतलब, मैं नहीं समझा। दहेज में अन्ना को दो एकड़ जमीन मिलने वाली थी। मिली क्या कैलाश? नहीं मिली। माँ के पिताजी का देहांत हुआ,तो माँ के भाई ने नहीं दी। इन कारणवश भी माँ को अन्ना बहुत पीटते थे। यानि सावित्री काकी के साथ सिर्फ व्यवहार हुआ। कैलाश, मैं आप से विनती करता हूं कि तू माँ को कभी दुख मत दो। क्योंकि वह सिर्फ वेदना ही सहती आई है। कभी नहीं दूंगा दुख। मैं मरते दम तक उसके साथ रहूंगा,बालू। अब आगे क्या करने का सोचा है कैलाश? परिवार का गुजारा किस तरह करेगा। मैं बकरियां संभालूंगा। मुझे छोटे भाई माणिक को पढ़ाना है और बहन की शादी भी। हो जाएगा, ज्यादा सोच मत। कुछ जरूरत पढ़ी तो मुझे कभी भी बताना,

मैं तुम्हारे साथ हूं और निरंतर रहूंगा। कैलाश बहुत बातचीत हुई, अब मैं चलता हूं। मुझे वापिस शहर जाना है।इस बार सावित्री काकी से नहीं मिला। अगली बार उनसे जी भर के बात करूंगा। काकी को बता देना बालू ने याद किया था। जल्द मिलेंगे। दूसरी बार। देखते– देखते उच्च शिक्षा पुरी हुई। दुनिया दारी समझ आने लगी। जिंदगी में माँ,बाप का क्या महत्व है, यह गाँव छोड़ने के बाद समझ आया। माँ की याद आ रही थी। माँ को मिले बहुत दिन हुए थे। फोन पर हर दिन बात होती थी लेकिन माँ को देखने का मन हुआ। मैं रात को ही गाँव के तरफ निकल गया।

सुबह–सुबह कैलाश का भाई माणिक रास्ते से जाते हुए दिखाई दिया, मैंने घर से ही जोर से आवाज दी–'माणिक! माणिक...।' उसने पीछे मुड़कर देखा और कहा– 'बालू भैया आप कब आए शहर से।' 'आज ही आया हूँ। परिवार में सब ठीक ठाक है न।' 'परिवार ही नहीं रहा।' 'मतलब, मैं नहीं समझा। क्या हुआ?' बहन की शादी हुई, वह चली गई। कभी मिलने नहीं आई या आने नहीं दिया, उसे ही मालूम। कैलाश की शादी हुई, वह भी चला गया नासिक। फिर परिवार कहा रहा। रही सिर्फ माँ। 'बकरियां कौन संभालता है?' 'सब मर गई। किस वजह से मरी यह आज तक पता नहीं चला।' 'फिर बहन की शादी कैसे की?' 'ब्याज से पैसें निकालकर की। इन कारणवश तो कॉलेज छोड़कर खेत में काम कर रहा हूँ। पैसें वापिस देने के लिए। माँ भी काम करती रहती है।' 'कैलाश के शादी को कितने दिन हुए?' 'डेढ़ साल।उसे लड़का भी हुआ,अभी।' 'तुम्हारी माँ कैलाश के साथ होगी।' 'नहीं। घर पर है। उसे कहा है माँ के लिए समय। माँ को जब से पता चला तब से वह बच्चे को देखना चाहती है, लेकिन लेकर कौन जाएगा? मुझे मालिक छुट्टी नहीं देता। उसे समय नहीं है। बालू भैया, घर आइए। माँ आप को बहुत याद करती है। मैं चलता हूं,काम पर जाना है।'

मैं जिस अवस्था में था,उसी अवस्था में घर से बाहर निकला और सावित्री काकी के घर की ओर बढ़ा। घर जाने के बाद दरवाजा खटखटाया। कुछ समय बाद दरवाजा खुला, तो सामने सावित्री काकी दिखाई दी। मुझे देखकर वह बहुत खुश हुई, जैसे उसे मेरे रुप में कैलाश दिखाई दिया हो। वह बोल नहीं सकती थी, लेकिन इशारों से उनके भाव मुझे समझ आते थे। वह साक्षात बोल रही है ऐसा भास होता था। सावित्री काकी मुझे इशारों में बोली –'आइए बेटा। बैठो।' मैंने कहा– 'कैसी है आप? सब अच्छा है न।' सावित्री काकी ने गर्दन हिलाते हुए कहा–'जो है अच्छा है।' मैंने कहा– 'कैलाश का फोन आता है क्या? आप से आता है मिलने?।' सावित्री काकी इशारों में बोलने लगी–'न फोन आता है न मिलने। मैं उसे बोलने और उसके बेटे को देखने के लिए तरस रही हूँ। उसके साथ समय बिताना भी चाहती हूँ।' मैंने कहा–'आप को पैसों की जरूरत है?' सावित्री काकी इशारों में बोली– 'मुझे पैसों की जरूरत नहीं है। मुझे अकेलापन सता रहा है। मुझे व्यक्त होने के लिए अपना कोई चाहिए, बस्स!' मैंने कहा– 'आप का परिवार तो बड़ा है। फिर तुम्हें किस बात की चिंता।' सावित्री काकी इशारों में बोलने लगी– 'परिवार बड़ा होने से कुछ नहीं होता, उनमें अपनापन होना चाहिए। नहीं तो पास होकर भी इंसान दूर होते हैं। माणिक मेरा बेटा है, पास है लेकिन कभी मुझे प्यार से बात नहीं करता। समाज के लोग अक्सर मुझे गूँगी नाम से पुकारते हैं, तब मुझे ज्यादा बुरा नहीं लगता। किंतु जब माणिक मुझे गूँगी कहकर बोलता है, तब बहुत तकलीफ होती है।'

मैंने कहा–'मैं कैलाश और माणिक को समझाता हूँ।' सावित्री काकी इशारों में बोलने लगी– 'किसी को मत समझाना। वे नादान नहीं हैं। जो है अच्छा है। मेरी किस्मत ही ऐसी है, उसे कौन क्या करेगा। हां, लेकिन एक बात सच है, गूँगे व्यक्ति की जिंदगी पीड़ादाई होती है। मैं गूँगी हूं इसका कतहीं दुख नहीं है, किंतु मैं सब सुन सकती हूं , इसका ज्यादा दुख है। क्योंकि लोग इतना कुछ बोलते हैं, मैं सुनती हूं, वेदना सहती हूं, लेकिन कुछ बोल नहीं पाती। मेरे दिल में बहुत कुछ है अच्छा–बुरा। शाब्दिक पीड़ा से परिशान हूँ। दिल का बोझ हालका करना चाहती हूं,लेकिन सुनने के लिए कोई तैयार नहीं। मुझे भले ही बोलना नहीं आता हो, लेकिन भावना तो व्यक्त कर सकती हूँ। मैंने बहुत दिनों बाद मनमुक्त बात की बालू। अब दिल का बोझ हालका हुआ। मेरी एक ही इच्छा है, समाज में तुम्हारे जैसे व्यक्ति का निर्माण हो। तब गूँगे, बहरे को मानसिक आधार मिलेगा। जीने की आस भी...।

दीप जलाएं

-मुकेश कुमार ऋषि वर्मा
आगरा, उत्तर प्रदेश

आओ सब जन मिल दीप जलाएं ।
अंधेरा मिटा उजाला घर ले आएं ।।

आओ सब जन मिल रंगोली सजाएं ।
घर – आंगन, खुशियां बिखराएं ।।

रात अमावस काली तो क्या।
दीपशिखा प्रज्ज्वलित प्रकाशित।।

हृदय से छल, कपट सभी मिटाएं ।
प्रेम के दीपक घर – घर जलाएं ।।

मन – संग मधुरता, खूब मुस्कुराएं ।
मिटा तिमिर, ज्योतिर्मय हो जाएं ।।

आओ सब जन मिल दीप जलाएं ।
नभ – मंडल तक खुशियां बिखराएं ।।

मेरी अभिव्यक्ति

कविताएं / लघु कथाएं लिखो

पुरस्कार जीतो

सीमित संख्या

द्वितीय पुरस्कार

₹5100/-

प्रथम पुरस्कार

₹11000/-

तृतीय पुरस्कार

₹2500/-

प्रविष्टि भेजने की अंतिम तिथि

15 नवंबर 2022

info@gssfoundation.org

74154 10516

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

GORAKSH SHAKTIDHAM SEVARTH FOUNDATION

अध्यात्म | शिक्षा | संस्कृति

www.gssfoundation.org

पंजीकरण फॉर्म साइट पर उपलब्ध है।